श्रीहरिनाम महामन्त्र
गौड़ीय वेदान्त प्रकाशन

श्रीहरिनाम महामन्त्र

श्रीश्रीगुरु–गौराङ्गौ जयतः

श्रीहरिनाम महामन्त्र

[महामन्त्रका क्रम, ऐश्वर्य और माधुर्यमयी व्याख्याएँ, हरिनामकी महिमा, हरिनाम ग्रहणकी प्रणाली और हरिनाममें अपराधका विचार]

श्रीगौड़ीय वेदान्त समिति एवं तदन्तर्गत भारतव्यापी
श्रीगौड़ीय मठोंके प्रतिष्ठाता श्रीकृष्णचैतन्याम्नाय
दशमाधस्तनवर श्रीगौड़ीयाचार्यक
ॐ विष्णुपाद अष्टोत्तरशतश्री
श्रीमद्भक्तिप्रज्ञान क

अनुगृहीत

त्रिदण्डिस्वामी
श्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराज
द्वारा संग्रहीत एवं सम्पादित

गौड़ीय वेदान्त प्रकाशन

प्रकाशक —
श्रीमान् भक्तिवेदान्त तीर्थ महाराज

दसवाँ संस्करण — २०,००० प्रतियाँ
ॐ विष्णुपाद श्रीश्रीमद्भक्तिप्रज्ञान क
तिरोभाव तिथि
श्रीचैतन्याब्द ५२२
१४ अक्टूबर २००८

प्राप्तिस्थान

श्रीक
मथुरा (उ॰प्र॰)
०५६५-२५०२३३४

श्रीरूप-सनातन गौड़ीय मठ
दानगली, वृन्दावन (उ॰प्र॰)
०५६५-२४४३२७०

श्रीगिरिधारी गौड़ीय मठ
दसविसा, राधाकुण्ड रोड
गोवर्धन (उ॰प्र॰)
०५६५-२८१५६६८

श्रीश्रीक
कोलेरडाङ्गा लेन
नवद्वीप, नदीया (प॰बं॰)
०९३३३२२२७७५

श्रीरमणबिहारी गौड़ीय मठ
बी-३, जनकपुरी, नई दिल्ली
०११-२५५३३५६८

खण्डेलवाल एण्ड संस
अठखम्बा बाजार, वृन्दावन
०५६५-२४४३१०१

प्रस्तावना

परम करुणामय एवं अहैतुकी कृपालु अस्मदीय गुरुपादपद्म नित्यलीला प्रविष्ट ॐ विष्णुपाद श्रीमद्भक्तिप्रज्ञान क
महाराजकी प्रेरणासे प्रकाशित हुई 'श्रीहरिनाम महामन्त्र' नामक लघु पुस्तिकाका दसवाँ संस्करण श्रद्धालु पाठकोंक
मुझे अपार आनन्दकी अनुभूति हो रही है। मैंने इस ग्रन्थको सहज, सरल रूपमें प्रस्तुत करनेका भरसक प्रयास किया है।

कलियुगमें श्रीकृष्ण-सङ्कीर्त्तन ही एकमात्र परमधर्मक
हुआ है। यह क
सनातन अर्थात् सभी जीवात्माओंका अपरिवर्तनीय वास्तविक स्वभाव है। जो स्थान, काल और पात्रक
वास्तवमें धर्म नहीं, बल्कि व्यक्तिगत श्रद्धा कहा जाता है। यद्यपि अँग्रेजी भाषामें किसी भी कारणसे अपनाये गये व्यक्तिगत व्यवहारको ही religion कह दिया जाता है, परन्तु यह बात ठीक नहीं है। क्योंकि जगत्में देखा जाता है कि कभी कोई हिन्दु मुस्लिम बन जाता है तथा कभी कोई मुस्लिम ईसाई। इस प्रकार प्रायः जगत्में सर्वत्र देखा जाता है। अतएव निष्कर्ष यह है कि किसी कारणवश अपनी श्रद्धाको एक स्थानसे हटाकर किसी दूसरे स्थानपर लगानेको वास्तवमें धर्म नहीं कहा जा सकता। धर्म तो उसे कहते हैं जो कभी किसी भी अवस्थामें परिवर्तित नहीं होता।

सङ्कीर्त्तन—सभीक
सभी परिस्थितियोंमें सब समय पालन करने योग्य धर्म है। लगभग पाँच सौ बाईस वर्ष पहले श्रीराधा-कृष्ण मिलित तनु श्रीगौराङ्ग महाप्रभुने इस सङ्कीर्त्तनरूपी महान् अस्त्रसे धर्मक
विवाद, सम्प्रदायक
दुर्नीतिक

विवाद, जातिवादक
समस्याओंक
सब प्रकारक
थी।

किन्तु आज विश्वमें सर्वत्र उपस्थित अनेकानेक समस्याओंकी संक्रामक बीमारी दिन-प्रतिदिन प्रायः सभीको अपने चंगुलमें फांस रही है। नित्यप्रति नये-नये विवादोंकी सृष्टि हो रही है। समन्वयवादरूपी समाधानक
आजकल चैतन्य नामकी किसी वस्तुको स्वीकार ही नहीं किया जा रहा है। विश्वमें सर्वत्र व्यापक ऐसी विषम परिस्थितियोंमें यदि कोई वस्तु सम्पूर्ण तथा सर्वाङ्ग सुन्दर समाधान प्रदान कर सकती है, तो वह है स्वयं श्रीचैतन्य महाप्रभु द्वारा आचरित एवं प्रचारित क
श्रीकृष्ण-नामसङ्कीर्त्तनरूपी महौषध। इसक
उपाय सार्थक हो ही नहीं सकता।

सर्वाधिक प्रमाणिक एवं सर्वोच्च महानुभावोंने स्थान-स्थानपर इन विचारोंका सुस्पष्ट रूपसे उल्लेख किया है। परम निर्मत्सर श्रीरूप, श्रीसनातन, भट्ट रघुनाथ, श्रीजीव, गोपाल भट्ट, दास रघुनाथ तथा श्रील वृन्दावनदास ठाक
परदुःख-दुःखी महाजनोंने भी शास्त्रोंक
कर श्रीमन् महाप्रभु द्वारा उच्चारित श्रीहरेकृष्ण-महामन्त्रकी अनेकानेक शास्त्रीय प्रमाणोंक

बहुत ही सौभाग्यसे किसी जीवको इन महानुभावोंक
श्रद्धा उत्पन्न होती है तथा वे सभी समस्याओंकी मूल जड़ अपनी सबसे बड़ी समस्या भवसागरको पार करनेक
धर्ममें प्रतिष्ठित होनेक
है।

किन्तु दुःखका विषय यही है कि आज कलिक
अनेकानेक इन्द्रजालिक व्यक्ति ऐसे श्रद्धालु, सरलचित्त व्यक्तियोंकी वञ्चनाक
अनेक विवाद उपस्थित करा रहे हैं। कोई कह रहा है कि महामन्त्रको

"हरे कृष्ण हरे कृष्ण" से प्रारम्भ न कर "हरे राम हरे राम" से प्रारम्भ करना चाहिये। कोई कह रहा है कि "श्रीकृष्ण चैतन्य प्रभु नित्यानन्द, हरे कृष्ण हरे राम श्रीराधे-गोविन्द" ही महामन्त्र है। अन्य कोई कह रहा है कि "निताई गौर राधे श्याम, हरे कृष्ण हरे राम" का जप ही समीचीन है। कोई कह रहा है कि महामन्त्रमें राम नाम भगवान् श्रीरामचन्द्रको लक्ष्य करता है। कोई कह रहा है कि यह महामन्त्र मन-ही-मन जप्य है, इसका उच्च स्वरसे उच्चारण नहीं करना चाहिये।

कलिक
जालको बिछानेवाले कलिको ही प्रामाणिक समझ रहे हैं। स्थूलदर्शी होनेक
सङ्कीर्त्तनरूपी अमोघ महौषधिक
कारण स्वकपोलकल्पित विचारोंक
हैं।

इन सब इन्द्रजालिक व्यक्तियोंकी जगत्क
खोलनेक
प्रभुक
इस छोटी-सी पुस्तिकाक
जगत्वासी अकृत्रिम नामसङ्कीर्त्तनरूपी चिन्तामणिको पाकर लाभान्वित हो सक

श्रीमन् महाप्रभुक
भगीरथ सच्चिदानन्द श्रील भक्तिविनोद ठाक
परमाराध्य परमगुरुदेव तथा श्रील गुरुपादपद्म ही श्रीकृष्ण-सङ्कीर्त्तनरूपी महौषधिक
अशेष कृपासे आज यद्यपि यह महौषध शुद्ध रूपमें सर्वत्र वितरित हो रही है तथा अपस्वार्थपर व्यक्तियोंकी क
रही है, तब भी इस पुस्तिकाको वितरित करनेकी इसलिए आवश्यकता है ताकि कोई अपस्वार्थपर व्यक्ति हरे कृष्ण महामन्त्रकी निर्मलताको नष्ट करनेका दुःसाहस न कर सक

साधुसङ्गमें नामसङ्कीर्त्तनका अनुगमन ही सनातन शिक्षाका सार है। हरे कृष्ण महामन्त्र श्रीराधा-कृष्ण परक मन्त्र है। इसक अनुशीलनसे जीवोंको अपने वास्तविक स्वरूपकी अनुभूतिक
श्रीराधा-कृष्ण युगलक

इस लघु पुस्तिकाका विश्वमें सर्वाधिक प्रचलित अँग्रेजी भाषा तथा अन्यान्य अनेकों भाषाओंमें अनुवाद हो चुका है, जिसक
बहुत-से लोगोंका उपकार हुआ है तथा वे शुद्ध रूपसे हरिनाम भी कर रहे हैं, किन्तु जिन लोगोंका दुराग्रह है, उनक
भगवान् भी क्या कर सकते हैं?

प्रस्तुत संस्करणकी कम्पोजिंग तथा ले-आउट आदिक
श्रीमान् सुखानन्द दासाधिकारी, बेटी कान्ता तथा बेटी शान्ति दासीकी सेवा-प्रचेष्टा अत्यन्त सराहनीय और विशेष उल्लेखनीय है। मुखपृष्ठका चित्र श्रीमती श्यामरानी दासीने प्रस्तुत किया है तथा मुखपृष्ठका डिजाइन श्रीमान् विकास दासाधिकारीने किया है। श्रीश्रीगुरु-गौराङ्ग-गान्धर्विका-गिरिधारी इन पर प्रचुर कृपाशीर्वाद वर्षण करें—उनक श्रीचरणोंमें यही प्रार्थना है।

अन्तमें भगवत्-करुणाके घन-विग्रह परम आराध्यतम श्रील गुरुपादपद्म मेरे प्रति प्रचुर कृपा वर्षण करें, जिससे उनकी मनोऽभीष्ट सेवामें अधिकाधिक अधिकार प्राप्त कर सकूँ—यही उनके प्रेम प्रदानकारी श्रीचरणोंमें सकातर प्रार्थना है।

शीघ्रतावश प्रकाशन हेतु इस ग्रन्थमें कुछ त्रुटियोंका रह जाना स्वाभाविक है। श्रद्धालु पाठकगण उसे संशोधन करके पाठ करेंगे और हमें सूचित करेंगे, जिससे कि अगले संस्करणमें हम उन त्रुटियोंका संशोधन कर सकें।

श्रीनन्दोत्सव	श्रीहरि-गुरु-वैष्णव-कृपालेश-प्रार्थी
श्रीचैतन्याब्द ५२२	दीन-हीन अकिञ्चन
२५ अगस्त, २००८ ई०	त्रिदण्डिभिक्षु श्रीभक्तिवेदान्त नारायण

विषय–सूची

विवरण **पृष्ठसंख्या**

श्रीहरिनाम महामन्त्र १

महामन्त्रका क्रम ५

श्रीचैतन्य महाप्रभु और महामन्त्र १५

महामन्त्रकी व्याख्याएँ २५

श्रीजीवगोस्वामिकृता 'महामन्त्र'–व्याख्या २७

श्रीगोपालगुरुगोस्वामिकृता 'महामन्त्र'–व्याख्या ३१

श्रीरघुनाथदासगोस्वामिकृता 'महामन्त्र'–व्याख्या ३८

श्रीसच्चिदानन्दभक्तिविनोदठक्कुरउद्धृता 'महामन्त्र'–व्याख्या ३९

पदकल्पतरुमें 'महामन्त्र' की व्याख्या ४२

श्रीहरिनामका माहात्म्य ४५

श्रीहरिनाम (श्रीभक्तिविनोद ठाकुर द्वारा लिखित) ५१

श्रीहरिनाम महामन्त्र

हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे।
हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे॥

वेद, उपनिषद्, पुराण और संहिता आदि सात्वत-शास्त्रोंक अनुसार कलियुगका महामन्त्र तथा तारक ब्रह्म नाम है—"हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे। हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे॥" इस सोलह हरिनामात्मक महामन्त्रका सङ्कीर्त्तन कलियुगका मुख्य धर्म है। भगवान्का 'नाम' साक्षात् भगवत्-स्वरूप ही है। भगवान् श्रीकृष्णने अपने स्वरूपक
लीलाओं तथा कृपा आदि समस्त शक्तियोंको इन नामोंमें पूर्ण रूपसे भर दिया है। यद्यपि भगवत् 'नाम' और भगवत्-स्वरूप 'नामी' ये दोनों सर्वथा अभिन्न हैं, इनमें कोई भेद नहीं है, तथापि किसी-किसी विषयमें नामी-ब्रह्मकी अपेक्षा नाम-ब्रह्मकी कृपा अधिक बतलायी गयी है। स्वयं-भगवान् श्रीकृष्ण ही मायाबद्ध जीवोंका उद्धार करनेक लिए अपनी अहैतुकी कृपासे 'नाम' क
अतएव सौभाग्यवान् जन श्रीहरिनामपरायण सद्गुरुक
महामन्त्रकी दीक्षा ग्रहणकर उसका सङ्कीर्त्तन, संख्यापूर्वक कीर्त्तन, उपांशु-जप और स्मरण आदिक
शास्त्रोंक
उच्चस्वरसे नामसङ्कीर्त्तनकी महिमा अधिक बतलायी गयी है।

जपतो हरिनामानि स्थाने शतगुणाधिकः।
आत्मानञ्च पुनात्युच्चैर्जपन् श्रोतृन् पुनाति च॥

(श्रीनारदीय, प्रह्लाद वाक्य)

हरिनाम जपपरायण व्यक्तिकी अपेक्षा उच्चस्वरसे हरिनाम–कीर्त्तनकारी सौगुना श्रेष्ठ है, यह बात सम्पूर्ण ठीक है, क्योंकि जपकारी व्यक्ति अपनेको ही पवित्र करते हैं, किन्तु उच्चस्वरसे नाम कीर्त्तनकारी अपनेको और उसक

कीट–पतङ्ग, वृक्ष, लता, गुल्म तक भी, जो बोल नहीं सकते, वे भी हरिनामको श्रवणकर भवसागरसे तर जाते हैं।

अतः कलिकालमें सोलह हरिनामात्मक महामन्त्रका सङ्कीर्त्तन ही समस्त साधनोंका शिरोमणि है। कलियुग–पावनावतारी श्रीचैतन्यमहाप्रभुने भी सदा–सर्वदा श्रीहरिनाम–सङ्कीर्त्तन करनेका उपदेश दिया है— "कीर्त्तनीयः सदा हरिः॥" बृहन्नारदीयपुराण (३८/१२६) में जोर देकर कहा गया है—

हरेर्नाम हरेर्नाम हरेर्नामैव क
कलौ नास्त्येव नास्त्येव नास्त्येव गतिरन्यथा॥

हरेर्नाम श्लोकको व्याख्या करते हुए श्रील कृष्णदास कविराज गोस्वामी कहते हैं कि—

कलिकाले नामरूपे कृष्ण–अवतार।
नाम हइते हय सर्व जगत्–निस्तार॥

दार्ढ्य लागि' 'हरेर्नाम' उक्ति तिनबार।
जड़लोक बुझाइते पुनः 'एव' कार॥

'केवल'–शब्दे पुनरपि निश्चयकरण।
ज्ञान–योग–तप–आदि कर्म–निवारण॥

अन्यथा जे माने, तार नाहिक निस्तार।
नाहि, नाहि, नाहि,—तिन उक्त 'एव' कार॥

(चै॰ च॰ आ॰ १७/२२–२५)

कलियुगमें स्वयं–भगवान् श्रीकृष्ण ही नामरूपमें अवतरित हुए हैं। हरिनामके द्वारा ही सारे जगत्का उद्धार होता है। जड़–बुद्धिवाले

लोगोंकी हरिनाममें दृढ़ताके लिए 'हरेर्नाम' पदको तीन बार तथा 'एव' पदका प्रयोग किया गया है। पुनः ज्ञान, योग, तप आदि कर्मोंक
है। जो व्यक्ति शास्त्रक
उद्धार कदापि सम्भव नहीं है। इसी बातको स्पष्ट करनेके लिए अन्तमें 'नास्त्येव' पदका भी तीन बार प्रयोग किया गया है।
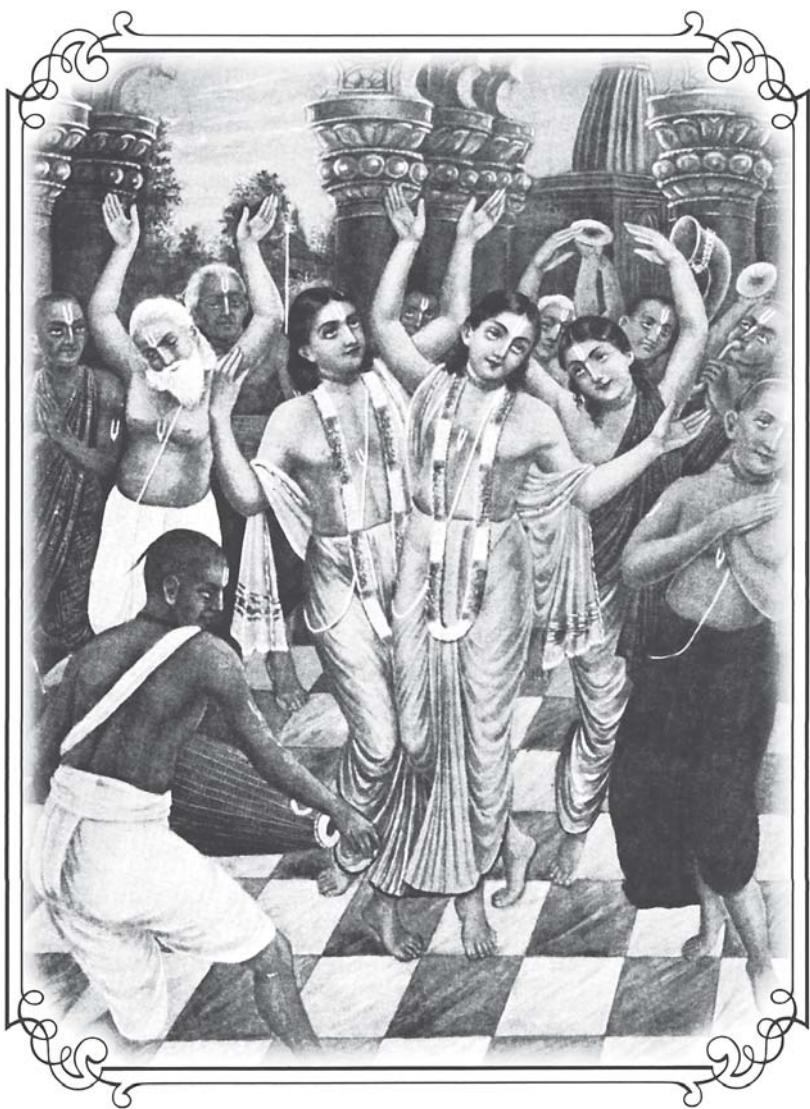
महामन्त्रका क्रम

क

चाहिये। उनकी युक्तियाँ ये हैं—

(१) वेंकटेश प्रेस मुम्बईसे छपे हुए कलिसंतरणोपनिषद्‌में यह महामन्त्र "हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे। हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे॥" इस प्रकार छपा है।

(२) 'कल्याण' गोरखपुरमें भी ऐसा ही क्रम देखा जाता है।

(३) त्रेतायुगमें श्रीरामका और पीछे द्वापरयुगमें श्रीकृष्णका आविर्भाव होनेक

का रहना ही युक्तिसङ्गत है।

उपर्युक्त शङ्का या युक्तियाँ सम्पूर्ण रूपसे निराधार हैं। वेंकटेश प्रेस मुम्बईक

महामन्त्र 'हरे कृष्ण' से ही प्रारम्भ देखा जाता है। कलकत्ते और जयपुरक

दूसरी बात, गोरखपुर गीताप्रेससे प्रकाशित कल्याण इस विषयमें प्रामाणिक आधार नहीं है। तीसरी बात त्रेतायुग पहले है तथा द्वापरयुग पीछे है, इस क्रमका प्रभाव इस सनातन नित्य महामन्त्रपर नहीं पड़ता। ये महामन्त्र युगातीत या कालातीत है।

इस विषयको निम्नलिखित प्रतियुगोंक

द्वारा समझा जा सकता है।

सत्ययुगका—**नारायण परावेदाः नारायण पराक्षराः।**
नारायण परामुक्तिः नारायण परागतिः॥

त्रेतायुगका—**रामनारायणानन्त मुक**
कृष्ण क

द्वापरयुगका—**हरे मुरारे मधुकैटभारे गोपाल गोविन्द मुक**
यज्ञेश नारायण कृष्ण विष्णो निराश्रयं मां जगदीश रक्ष॥

कलियुगका—**हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे।**
हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे॥

षोड़शैतानि नामानि द्वात्रिंशद् वर्णकानि हि।
कलौयुगे महामन्त्रः सम्मतोजीवतारणे॥
(अनन्तसंहिता)

कहनेका तात्पर्य यह है कि श्रीकृष्णावतारसे पूर्व त्रेतायुगक
ब्रह्म नाम-मन्त्रमें भी मुक
कृष्णनाम देखे जाते हैं। अतः प्रस्तुत महामन्त्रक
करनेमें कोई तर्क या युक्ति उचित नहीं है।

अनन्तसंहिताक
है कि कलिसन्तरण आदि उपनिषदोंमें, महामन्त्रमें "हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे। हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे॥"—यह क्रम लिखा है।

दूसरी बात, यह महामन्त्र गुरुपरम्परामें श्रीनारदने अपने गुरु श्रीब्रह्मासे प्राप्त किया था। यह नियम श्रीब्रह्म-माध्व-गौड़ीय-वैष्णव-परम्परामें आज भी प्रचलित है। दूसरे सम्प्रदायोंमें यह महामन्त्र गुरुपरम्परासे प्राप्त नहीं होता। अतः इसका रहस्य और क्रम दूसरे सम्प्रदायोंको प्राप्त नहीं है। इसीलिए वे यदि इस क्रमको परिवर्त्तित करक
बात नहीं है।

विभिन्न प्रामाणिक शास्त्रोंमें इस महामन्त्रका स्वरूप जिस प्रकारसे निर्दिष्ट हुआ है, उसक

ज्ञानामृतसारमें कहा है कि—

"शिष्यस्योदङ् मुखस्थस्य हरेर्नामानि षोडश।
संश्राव्यैव ततो दद्यान्मन्त्रं त्रैलोक्यमङ्गलम्॥"

उत्तरकी ओर मुख करक
श्रीहरिक
कर ही, गुरुदेवको शिष्यक
की दीक्षा देनी चाहिये।

ब्रह्मयामल नामक ग्रन्थमें श्रीशिवक
इस प्रकार लिखा है—

"हरिं विना नास्ति किञ्चित् पापनिस्तारकं कलौ।
तस्माल्लोकोद्धरणार्थं हरिनाम प्रकाशयेत्॥

सर्वत्र मुच्यते लोको महापापात् कलौ युगे॥

हरेकृष्णपदद्वन्द्वं कृष्णेति च पदद्वयम्।
तथा हरेपदद्वन्द्वं हरेराम इति द्वयम्॥

तदन्ते च महादेवि! राम राम द्वयं वदेत्।
हरे हरे ततो ब्रूयाद् हरिनाम समुद्धरेत्॥

महामन्त्रं च कृष्णस्य सर्वपापप्रणाशकमिति॥"

हे महादेवि! देखो, कलियुगमें श्रीहरिनामक
सरलतासे पापोंसे छुटकारा नहीं दिला सकता है, अतः सर्वसाधारण
लोगोंका उद्धार करनेक
आवश्यक है। कलियुगमें 'महामन्त्र' का सङ्कीर्त्तन करनेसे सभी लोग
महापातकोंसे भी सहज ही विमुक्त हो सकते हैं। 'महामन्त्र' में पहले
'हरे कृष्ण, हरे कृष्ण' ये दो पद बोलने चाहिये। उसक
कृष्ण' ये दो पद, तथा तदुपरान्त 'हरे, हरे' ये दो पद बोलने चाहिये।
उसक
दो पद, तदनन्तर 'हरे, हरे' इन दो पदोंको बोलकर, सर्वपापविनाशक
श्रीकृष्णक
चाहिये।

राधातन्त्रमें कहा गया है—

“शृणु मातर्महामाये! विश्वबीजस्वरूपिणि!।
हरिनाम्नो महामाये! क्रमं वद सुरेश्वरि!॥”

कोई भक्त प्रार्थना कर रहा है कि हे विश्वबीजस्वरूपिणि! सुरेश्वरि! महामाये! मातः! मेरी प्रार्थना सुनिये। मुझे कृपया श्रीहरिनाम ‘महामन्त्र’ का क्रम बतलाइये।

देवीने उस भक्तको महामन्त्रका क्रम इस प्रकार बतलाया—

“हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे।
हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे॥

द्वात्रिंशदक्षराण्येव कलौ नामानि सर्वदम्।
एतन्मन्त्रं सुतश्रेष्ठ! प्रथमं शृणुयान्नरः॥”

हे पुत्रश्रेष्ठ! सर्वसिसद्धिप्रद ‘हरे कृष्ण, हरे कृष्ण’ इत्यादि सोलह नाम, बत्तीस अक्षरवाले श्रीकृष्णनामको ही कलियुगमें ‘महामन्त्र’ कहा गया है। अतः अपना कल्याण चाहनेवाले मनुष्यको, श्रीगुरुदेवक द्वारा, पहले उसीका श्रवण करना चाहिये।

उसी राधातन्त्रमें त्रिपुरादेवीने भी ऐसा निर्देश दिया है—

“हरिनाम्ना बिना पुत्र! दीक्षा च विफला भवेत्।
गुरुदेवमुखाच्छ्रुत्वा हरिनाम पराक्षरम्॥

ब्राह्मण–क्षत्र–विट्–शूद्राः श्रुत्वा नाम पराक्षरम्।
दीक्षां क

हे पुत्रश्रेष्ठ! तुम महाविद्याओंक
मुखसे ‘हरे कृष्ण’ इत्यादि हरिनामात्मक ‘महामन्त्र’ श्रवणक
श्रीगोपालमन्त्र आदि की दीक्षा निष्फल हो जाती है; अतः
ब्राह्मण–क्षत्रिय आदि चारों वर्णोंक
‘महामन्त्र’ को श्रवण (ग्रहण) कर ही, श्रीगोपालमन्त्र आदि मन्त्रोंकी दीक्षा ग्रहण करनी चाहिये।

पद्मपुराणमें भी कहा गया है कि—

“द्वात्रिंशदक्षरं मन्त्रं नामषोडशकान्वितम्।
प्रजपन् वैष्णवो नित्यं राधाकृष्णस्थलं लभेत्॥”

सोलह नामोंसे युक्त बत्तीस अक्षरवाले ‘हरे कृष्ण’ इत्यादि ‘महामन्त्र’ को, नित्य जप करनेवाला वैष्णव, श्रीराधाकृष्णक गोलोक–वृन्दावनधामको प्राप्त कर लेता है।

देखो, ब्रह्माण्डपुराणक
रोमहर्षणसूतकी प्रार्थना इस प्रकार है—

“यत्त्वया कीर्तितं नाथ! हरिनामेति संज्ञितम्।
मन्त्रं ब्रह्मपदं सिद्धिकरं तद् वद नो विभो!॥”

हे विभो! हे प्रभो! आपने श्रीहरिनामात्मक ब्रह्मस्वरूप एवं सिद्धिप्रद जो मन्त्र कहा है, उसक
करें।

इसक

“ग्रहणाद् यस्य मन्त्रस्य देही ब्रह्ममयो भवेत्।
सद्यः पूतः सुरापोऽपि सर्वसिद्धियुतो भवेत्।
तदहं तेऽभिधास्यामि महाभागवतो ह्यसि॥

हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे।
हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे॥

इति षोडशकं नाम्नां त्रिकालकल्मषापहम्।
नातः परतरोपायः सर्ववेदेषु विद्यते॥”

देखो पुत्र! जिस मन्त्रको ग्रहण करनेसे देहधारी प्राणी ब्रह्ममय हो जाता है एवं मद्य पान करनेवाला व्यक्ति भी तत्काल पवित्र होकर सब सिद्धियोंसे युक्त हो जाता है, उस महामन्त्रका उपदेश मैं तुम्हें अवश्य प्रदान करूँगा; क्योंकि तुम योग्यपात्र महाभागवत

हो। देखो, 'हरे कृष्ण' इत्यादि सोलह नामोंवाला 'महामन्त्र', त्रैकालिक–पापोंको विनष्ट करनेवाला है। चारों वेदोंमें इस 'महामन्त्र' से परे, संसारसे पार होनेका, कोई भी श्रेष्ठ उपाय नहीं बतलाया गया है।

अनन्तसंहितामें भी कहा गया है कि—

"हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे।
हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे॥

षोडशैतानि नामानि द्वात्रिंशद्वर्णकानि हि।
कलौ युगे महामन्त्रः सम्मतो जीवतारणे॥

उत्सृज्यैतन्महामन्त्रं ये त्वन्यत् कल्पितं पदम्।
महानामेति गायन्ति ते शास्त्रगुरुलङ्घिनः॥"

'हरे कृष्ण, हरे कृष्ण' इत्यादि बत्तीस वर्णोंवाले सोलह नाम ही, कलियुगमें जीवोंक
नामसे विख्यात हैं। अतः जो लोग, इस 'महामन्त्र' को छोड़कर, अपने अथवा दूसरोंक
गौर राधे श्याम, हरे कृष्ण हरे राम अथवा श्रीकृष्ण चैतन्य प्रभु नित्यानन्द, हरे कृष्ण हरे राम श्रीराधे गोविन्द आदि) को, महामन्त्रक नामसे प्रचार करते हैं, वे लोग शास्त्र एवं गुरुजनोंका उल्लङ्घन करनेवाले हैं। यदि कोई पूछे कि 'हरे कृष्ण' इत्यादि सोलह नामोंवाले मन्त्रको ही 'महामन्त्र' क्यों कहते हैं, तो इसका उत्तर यह है कि भगवान् श्रीकृष्णक
सङ्कटों, अविद्या आदिको हरण करनेवाला, 'कृष्ण' नामक
प्रेमदाता और 'राम' नामक
नाम नहीं हैं। इस महामन्त्रमें इन तीनों मुख्यनामोंका समावेश है। दूसरी बात यह है कि ये सोलह नाम सम्बोधनात्मक हैं, इनमें नमः, ॐ, क्लीं, स्वाहा आदि पदोंका समावेश न होनेक
महामन्त्र कहते हैं।

सनत्क

"हरेकृष्णौ द्विरावृत्तौ कृष्ण तादृक् तथा हरे।
हरे राम तथा राम तथा तादृक् हरे पुनः॥

हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे।
हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे॥"

अर्थात् पहले 'हरे कृष्ण' दो बार, पुनः 'कृष्ण' दो बार, तदनन्तर 'हरे' दो बार आवृत्ति करे; तदनन्तर 'हरे राम' दो बार, पुनः 'राम' दो बार और तदनन्तर 'हरे' दो बार आवृत्ति करे। ऐसा करनेसे महामन्त्र हुआ—हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे। हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे॥

देखो यजुर्वेदीय-कलिसन्तरणोपनिषद्में भी 'महामन्त्र' का स्वरूप और माहात्म्य इस प्रकार बतलाया गया है—

हरिः ॐ॥ द्वापरान्ते नारदो ब्रह्माणं जगाम, कथं भगवन्! गां पर्यटन् कलिं सन्तरेयमिति। स होवाच ब्रह्मा साधु पृष्टोऽस्मि सर्वश्रुतिरहस्यं गोप्यं तच्छृणु येन कलिसंसारं तरिष्यसि। भगवत आदिपुरुषस्य नारायणस्य नामोच्चारणमात्रेण निर्धूतकलिर्भवति। नारदः पुनः पप्रच्छ। तन्नाम किमिति? स होवाच हिरण्यगर्भः—"हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे। हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे॥" इति षोडशकं नाम्नां कलिकल्मषनाशनम्। नातः परतरोपायः सर्ववेदेषु दृश्यते॥ इति षोडशकलावृतस्य जीवस्य आवरणविनाशनम्। ततः प्रकाशते परंब्रह्म मेघापाये रविरश्मिमण्डलीवेति। पुनर्नारदः पप्रच्छ। भगवन्! कोऽस्य विधिरिति? स होवाच नास्य विधिरिति। सर्वदा शुचिरशुचिर्वा पठन् ब्रह्मणः सलोकतां समीपतां सरूपतां सायुज्यतामेति।

द्वापरक

बोले कि हे भगवन्! भूतलपर भ्रमण करता हुआ मैं कलिकालको किस प्रकार पार कर सक

श्रीब्रह्माने कहा—हे पुत्र! तुमने बहुत अच्छा प्रश्न किया। सभी वेदोंका जो गोपनीय रहस्य है उसे सुनो, जिसक
कलिरूप-संसारसे अनायास ही तर जाओगे। आदिपुरुष भगवान् श्रीमन् नारायण (कृष्ण) क
रूपसे काँपने लगता है।

श्रीनारदने पुनः पूछा कि वह नाम कौन-सा है? उसका स्वरूप क्या है?

इसक
कृष्ण हरे हरे। हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे॥" इस प्रकार सोलह नामोंवाला यह जो 'महामन्त्र' है, यह कलिक
सम्पूर्ण रूपसे विनष्ट करनेवाला है। सभी वेदोंमें इससे श्रेष्ठ और कोई भी साधन नहीं दीखता है। यह मन्त्र षोडशकलाओंसे आवृत अर्थात् पञ्चभूत एवं ग्यारह इन्द्रियोंक
आवरणको विनष्ट करनेवाला है। उसक
परब्रह्म उसी प्रकारसे प्रकाशित हो जाते हैं जैसे बादलोंक
होनेपर सूर्यकी किरणोंका समुदाय प्रकाशित हो जाता है।

श्रीनारदने पुनः पूछा कि भगवन्! इस 'महामन्त्र' क
क्या है?

श्रीब्रह्माने कहा—इसकी कोई विधि नहीं है। पवित्र अथवा अपवित्र किसी भी अवस्थामें कोई भी व्यक्ति, इस 'महामन्त्र' का स्पष्ट उच्चारण करता हुआ, ब्रह्मकी सलोकता-समीपता-सरूपता एवं सायुज्यताको आनुषंगिक रूपसे प्राप्त कर लेता है।

क
श्रीकृष्णप्रेमपर्यन्त प्राप्त कर लेता है।

(इस विषयमें श्रीचैतन्यचरितामृत आ० ७/८३-८६; म० २५/१४७, १९२; अ० ३/१७७; अ० ७/१०४; अ० २०/११ भी द्रष्टव्य है)।

श्रीभक्तिचन्द्रिकाक

अथ मन्त्रवरं वक्ष्ये द्वात्रिंशदक्षराऽन्वितम्।
सर्वपापप्रशमनं सर्वदुर्वासनाऽनलम्॥

यह 'महामन्त्र' बत्तीस अक्षरोंसे युक्त है; समस्त पापोंका नाशक है, सभी प्रकारकी दुर्वासनोंको जलानेक

चतुर्वर्गप्रदं सौम्यं भक्तिदं प्रेमपूर्वकम्।
दुर्बुद्धिहरणं शुद्धसत्त्वबुद्धिप्रदायकम्॥

धर्म–अर्थ–काम–मोक्षको देनेवाला है, सुन्दर स्वरूपवाला है, प्रेमलक्षणाभक्तिको देनेवाला है, दुर्बुद्धिको हरनेवाला है, शुद्धसत्त्वरूप भगवत्–वृत्तिवाली बुद्धिको देनेवाला है।

सर्वाराध्यं सर्वसेव्यं सर्वेषां कामपूरकम्।
सर्वाधिकारसंयुक्तं सर्वलोकैकबान्धवम्॥

सभीका आराधनीय और सेवनीय है, सभीकी कामनाओंको पूरा करनेवाला है, सभीक
सङ्कीर्त्तनमें सभीका अधिकार है; यह महामन्त्र, सभीका मुख्य बान्धव है।

सर्वाकर्षणसंयुक्तं दुष्टव्याधिविनाशनम्।
दीक्षाविधिविहीनं च कालाकालविव जतम्।

सभीको आकर्षण करनेकी शक्तिसे युक्त है, दुष्टव्याधियोंका विनाशक है, दीक्षा विधि आदिकी अपेक्षासे रहित है तथा समयक प्रतिबन्धसे रहित है।

वाङ्मात्रेणर्चितं बाह्यपूजाविध्यनपेक्षकम्।
जिह्वास्पर्शनमात्रेण सर्वेषां फलदायकम्।
देशकालाऽनियमितं सर्ववादिसुसम्मतम्॥१॥

वाणीमात्रसे पूजित होने योग्य है, बाह्य पूजा विधिकी अपेक्षा नहीं करता है, सभीको क

देश-काल आदिक
सुसम्मत है॥१॥

और देखो, अथर्ववेदकी पिप्पलाद-शाखामें कहा है कि—

स्वनाम-मूलमन्त्रेण सर्वं ह्लादयति विभुः,
स एव मूलमन्त्रं जपति हरिरिति कृष्ण इति राम इति।

सर्वावतारी प्रभु श्रीकृष्ण अपने नामरूप-मूलमन्त्रक
आह्लादित करते रहते हैं एवं वे ही श्रीकृष्णचैतन्य महाप्रभुक
'हरे कृष्ण' इत्यादि स्वरूपवाले मूल महामन्त्रको स्पष्ट उच्चारण करते रहते हैं। महामन्त्रक
है—

मन्त्रो गुह्यः परमो भक्तिवेद्यः नामान्यष्टावष्ट च शोभनानि।
तानि नित्यं ये जपन्ति धीरास्ते वै मायामतितरन्ति नान्ये॥

परमं मन्त्रं परमरहस्यं नित्यमावर्तयति।

'महामन्त्र' परमगुह्य है एवं भक्तिक
है। उसमें 'हरे कृष्ण' इत्यादि एवं 'हरे राम' इत्यादि परम मनोहर आठ-आठ नाम हैं, अतः जो बुद्धिमान् व्यक्ति उन नामोंका नित्य जप करते हैं वे मायासे अवश्य ही विमुक्त हो जाते हैं, दूसरे नहीं। इसलिए बुद्धिमान् पुरुष 'महामन्त्र' का कीर्त्तन, स्मरण और जप सदा-सर्वदा किया करते हैं।

ब्रह्माण्डपुराण उत्तरखण्डक
गया है कि वृषभानुराजाने क्रतुमुनिसे प्रार्थना की कि हे भगवन्! यदि मेरे ऊपर आपका अनुग्रह है, तो मुझे हरिक
कीजिये। उस समय महात्मा क्रतुमुनिने उन्हें 'हरे कृष्ण' इत्यादि सोलह नामोंको प्रदान किया। अतः बुद्धिमान् व्यक्तिको इसी 'महामन्त्र' का सङ्कीर्त्तन, सदा-सर्वदा करते रहना चाहिये—"नामसङ्कीर्तनं तस्मात् सदा कार्यं विपश्चिता।"

श्रीचैतन्य महाप्रभु और महामन्त्र

श्रीहरिनाम-सङ्कीर्त्तनक
प्रति 'महामन्त्र' क
भट्टाचार्यने भी कहा है कि—

विषण्णचित्तान् कलिघोरभीतान्, संवीक्ष्य गौरो हरिनाममन्त्रम्।
स्वयं ददौ भक्तजनान् समादिशत्, सङ्कीर्तयध्वं ननु नृत्यवाद्यैः॥

श्रीचैतन्य महाप्रभुने कलिकालसे विशेष भयभीत एवं दुःखी चित्तवाले जीवोंको देखकर, कृपापूर्वक स्वयं 'महामन्त्र' का दान दिया एवं भक्तजनोंक
नृत्य-वाद्य आदिक

"हरेर्नामप्रसादेन निस्तरेत् पातकी जनः।
उपदेष्टा स्वयं कृष्णचैतन्यो जगदीश्वरः॥

कृष्णचैतन्यदेवेन हरिनाम प्रकाशितम्।
येन क तत्प्राप्तं धन्योऽसौ लोकपावनः॥"

श्रीहरिनामकी कृपासे, पापीजनका भी उद्धार हो जाता है; क्योंकि श्रीहरिनामक
अतः श्रीकृष्णचैतन्यदेवक
व्यक्तिको प्राप्त हो गया वही व्यक्ति धन्य है और वह अपने सङ्गसे दूसरे लोगोंको भी पवित्र करनेवाला बन जाता है।

श्रीचैतन्यचरितमहाकाव्य (११/५४) में महाकवि श्रीकर्णपूरने कहा है—

"ततः श्रीगौराङ्गः समवददतीव प्रमुदितो
हरेकृष्णेत्युच्चैर्वद मुहुरिति श्रीमयतनुः।

ततोऽसौ तत् प्रोच्य प्रतिवलितरोमाञ्चललितो
रुदंस्तत्तत् कर्मारभत बहुदुःखैर्विदलितः॥"

(श्रीचैतन्य महाप्रभुक
लेकर अत्यन्त दुःखसे रोते-रोते विह्वल हो गया तथा श्रीचैतन्य महाप्रभुक
श्रीराधाभाव-विभावित-विग्रहवाले श्रीचैतन्य महाप्रभु अत्यन्त प्रसन्न होकर बोले कि हे नापित! तुम उच्चस्वरसे बारम्बार "हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे। हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे"—इस 'महामन्त्र' का कीर्त्तन करो। श्रीमन् महाप्रभुका निर्देश पाकर उस नाईने मन्त्रमुग्ध होकर महामन्त्रका कीर्त्तन करते हुए रोमञ्चित और पुलकित होकर महान दुःखसे व्याक
उनका मुण्डन करना आरम्भ कर दिया।

श्रीचैतन्यमङ्गल ग्रन्थमें भी देखा जाता है कि—

"बाहु प्रसारिया प्रभु ब्राह्मणे तुलिला।
तार घरे भक्तिभरे गान आरंभिला॥

अपनी भुजाओंको फैलाकर प्रभुने ब्राह्मणको उठाया तथा उसक घरमें भक्तिपूर्वक गान आरम्भ किया।

ब्राह्मणेर घर येन हैल वृन्दावन।
हरिनाम शुनिबारे आइसे सर्वजन॥

ऐसे लगा, जैसे कि ब्राह्मणका घर वृन्दावन बन गया हो। हरिनम श्रवण करनेक

हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे।
हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे॥"

वे सभी मिलकर उपरोक्त 'महामन्त्र' का कीर्त्तन करने लगे।

"'हरे कृष्ण' नाम प्रभु बले निरन्तर'।

श्रीमन् महाप्रभु निरन्तर 'हरे कृष्ण' नामका उच्चारण करते हैं।

प्रसन्न श्रीमुखे हरे कृष्ण कृष्ण बलि।
विजय हइला गौरचन्द्र क

प्रसन्न श्रीमुखसे हरे कृष्ण, कृष्ण बोलकर कौतुहली श्रीगौरचन्द्रकी विजय हुई।

हरे कृष्ण हरे कृष्ण बलि' प्रेमसुखे।
प्रत्यक्ष हैला आसि' अद्वैत-सम्मुखे॥"

'हरे कृष्ण हरे कृष्ण' बोलते-बोलते प्रेम सुखमें निमग्न होकर श्रीमन् महाप्रभु श्रीअद्वैताचार्यक

श्रीचैतन्यभागवतमें भी कहा गया है कि—

"जय जय 'हरे कृष्ण'-मन्त्रेर प्रकाश।
जय जय निजभक्तिग्रहण-विलास॥"

(म॰ ६/११७)

'हरे कृष्ण' मन्त्रक
स्वीकार करनेक
जानेवाले विलासकी जय हो, जय हो।

"प्रभु बले,—"कृष्णभक्ति हउक सबार।
कृष्णनाम-गुण वइ ना बलिह आर॥

श्रीमन् महाप्रभुने कहा—सभीको कृष्णभक्तिकी प्राप्ति हो। श्रीकृष्णक

आपने सबारे प्रभु करे उपदेशे।
"कृष्णनाम महामन्त्र शुनह हरिषे॥

स्वयं श्रीमन् महाप्रभु सभीको उपदेश देते हुए कहने लगे—तुम सभी कृष्णनामरूपी महामन्त्रको आनन्दित होकर श्रवण करो।

हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे।
हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे॥

प्रभु बले, "कहिलाङ एइ महामन्त्र।
इहा जप' गिया सबे करिया निर्बन्ध॥

श्रीमन् महाप्रभुने कहा—मैंने तुम सभीको यह महामन्त्र कह सुनाया है। तुम सभी इसकी निर्धारित संख्या रखकर जप करो।

इहा हैते सर्वसिद्धि हइबे सबार।
सर्वक्षण बल इथे विधि नाहि आर॥"

(म॰ २३/७४-७८)

इसीसे सभीकी सब प्रकारकी सिद्धियाँ होगी। सभी समय इसका उच्चारण करो। इसक

"कि शयने कि भोजने किबा जागरणे।
अहर्निश चिन्त कृष्ण बलह वदने॥"

(म॰ २८/२८)

क्या शयन, क्या भोजन तथा क्या जागरण—सब समय कृष्णका स्मरण करो तथा मुखसे उनका नाम उच्चारण करो।

"सर्वदा श्रीमुखे 'हरे कृष्ण हरे हरे'।
बलिते आनन्दधारा निरवधि झरे॥"

(अ॰ १/१९९)

सदैव श्रीमुखसे 'हरे कृष्ण हरे हरे' बोलते हुए श्रीमन् महाप्रभुक नेत्रोंसे निरन्तर आनन्दाश्रु प्रवाहित होते हैं।

"कलियुग-धर्म हय नामसङ्कीर्त्तन।
चारियुगे चारि-धर्म जीवेर कारण॥

(आ॰ १४/१३७)

कलियुगका धर्म नाम सङ्कीर्तन है। चारों युगोंमें चार प्रकारक धर्म जीवोंक

अतएव कलियुगे नामयज्ञ सार।
आर कोन धर्म कैले नाहि हय पार॥

अतएव कलियुगमें नाम यज्ञ ही सार है। अन्य किसी धर्मका पालन करनेसे कोई भी भवसागरको पार नहीं कर सकता।

रात्रिदिन नाम लय खाइते शुइते।
ताँहार महिमा वेदे नाहि पारे दिते॥

जो व्यक्ति खाते-सोते, रात-दिन भगवान्‌का नाम उच्चारण करता है, (वेद भी ठीक-ठीक रूपमें) उसकी महिमाक
सकते।

शुन मिश्र, कलियुगे नाहि तप यज्ञ।
येइ जन भजे कृष्ण, ताँर महाभाग्य॥

हे तपन मिश्र! सुनो, कलियुगमें तप और यज्ञ आदिका कोई विशेष फल नहीं है। जो व्यक्ति भगवान् श्रीकृष्णका भजन करता है, वह महाभाग्यशाली है।

अतएव गृहे तुमि कृष्ण भज गिया।
क

अतएव तुम अपने घर जाकर कृष्णका भजन करो तथा
क

साध्य-साधनतत्त्व ये किछु सकल।
हरिनामसङ्कीर्तने मिलिबे सकल॥
(आ॰ १४/१३९-१४३)

साध्य-साधन तत्त्व आदि जो कुछ भी है, हरिनाम-सङ्कीर्त्तनसे ही प्राप्त हो जायेगा।

हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे।
हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे॥

एइ श्लोक नाम बलि' लय महामन्त्र।
षोल-नाम बत्तिश-अक्षर एइ तन्त्र॥

इस श्लोकक
सभी सम्बोधनक

साधिते साधिते यबे प्रेमांक
साध्य-साधनतत्त्व जानिबा से तबे॥

(आ॰ १४/१४५-१४७)

नाम करते-करते जब प्रेमका अङ्कुर निकलेगा, तभी तुम साध्य और साधन तत्त्वक

श्रीचैतन्यचरितामृतमें भी कहा गया है कि—

"कृष्णनाम-महामन्त्रेर एइ त' स्वभाव।
येइ जपे, तार कृष्णे उपजये भाव॥

कृष्ण नाम महामन्त्रका यही तो स्वभाव है कि जो भी इसका जप करता है, उसक

कृष्णविषयक प्रेमा—परम पुरुषार्थ।
यार आगे तृणतुल्य चारि पुरुषार्थ॥

कृष्ण विषयक प्रेम ही परम पुरुषार्थ है, जिसक
चारों पुरुषार्थ तृणक

पञ्चम पुरुषार्थ—प्रेमानन्दामृतसिन्धु।
ब्रह्मादि आनन्द यार नहे एक बिन्दु॥

पञ्चम पुरुषार्थ (कृष्णप्रेम) प्रेमानन्दरूपी अमृतका समुद्र है। ब्रह्मा आदिका आनन्द जिसककी एक बूँदक

कृष्णनामेर फल—'प्रेमा', सर्वशास्त्रे कय।"

(आ॰ ७/८३–८६)

सभी शास्त्र यही कहते हैं कि कृष्ण नामका फल 'प्रेम' है।

"कलिकाले नामरूपे कृष्ण–अवतार।
नाम हैते हय सर्वजगत्–निस्तार॥"

(आ॰ १७/२२)

कलियुगमें श्रीकृष्णनामके रूपमें अवतरित हुए हैं। नामसे ही सम्पूर्ण जगत्का उद्धार होता है।

"कलिकाले धर्म—कृष्णनामसङ्कीर्त्तन॥

कलियुगका धर्म कृष्णनाम–सङ्कीर्त्तन ही है।

सङ्कीर्त्तनयज्ञे ताँरे करे आराधन।
से त' सुमेधा आर–कलिहतजन॥"

(म॰ ११/९८–९९)

जो व्यक्ति सङ्कीर्त्तन यज्ञ द्वारा भगवान्की आराधना करता है, वही अत्यन्त बुद्धिमान् है, उसक
हत बुद्धिवाले हैं।

"निरन्तर कर कृष्णनामसङ्कीर्त्तन।
हेलाय 'मुक्ति' पाबे, पाबे प्रेमधन॥"

(म॰ २५/१४७)

निरन्तर श्रीकृष्णनाम–सङ्कीर्त्तन करो। हेलामें ही अर्थात् नामाभाससे ही 'मुक्ति' प्राप्त हो जायेगी तथा शुद्धनामसे प्रेमधनकी प्राप्ति होगी।

"एक 'नामाभासे' तोमार पाप–दोष याबे।
आर 'नाम' लइते कृष्णचरण पाइबे॥"

(म॰ २५/१९२)

एक 'नामाभास' से ही तुम्हारे पाप-दोष आदि चले जायेंगे तथा (शुद्ध) 'नाम' लेनेसे ही श्रीकृष्ण चरणकमलकी प्राप्ति हो जायेगी।

"नामेर फले कृष्णपदे प्रेम उपजय॥"

(अ॰ ३/१७७, ७/१०४)

नामक
होता है।

"कलिकालेर धर्म-कृष्णनामसङ्कीर्त्तन।"

(अ॰ ७/११)

कलियुगका धर्म कृष्णनाम-सङ्कीर्त्तन ही है।

"हर्षे प्रभु कहेन,—शुन स्वरूप-रामराय।
नामसङ्कीर्त्तन-कलौ परम उपाय॥

प्रसन्नतापूर्वक श्रीमन् महाप्रभुने कहा—हे स्वरूप दामोदर! हे रामानन्द राय! सुनो! कलियुगमें नामसङ्कीर्त्तन ही परम उपाय है।

सङ्कीर्त्तनयज्ञे कलौ कृष्ण-आराधन।
सेइ त' सुमेधा पाय कृष्णेर चरण॥"

(अ॰ २०/८-९)

कलियुगमें कृष्णकी आराधना सङ्कीर्त्तन यज्ञ द्वारा ही होती है। (तथा जो) सुबुद्धिमान् व्यक्ति ऐसा करता है, वही श्रीकृष्णक चरणकमलोंको प्राप्त करता है।

"नामसङ्कीर्त्तने हय सर्वानर्थ-नाश।
सर्वशुभोदय कृष्णे प्रेमेर उल्लास॥"

(अ॰ २०/११)

नामसङ्कीर्त्तन करनेसे सब प्रकारक
तथा श्रीकृष्णमें प्रेमक
जाते हैं।

"खाइते शुइते यथा तथा नाम लय।
काल, देश, नियम नाहि सर्वसिद्धि हय॥"

(अ॰ २०/२६)

इसे करनेमें किसी काल, देश आदिका नियम नहीं है। खाते-सोते, उठते-बैठते, जहाँ-तहाँ सदैव जो कृष्णनामका उच्चारण करता है। वह इसीसे सब प्रकारकी सिद्धि प्राप्त करता है।

"एइमत हञा येइ कृष्णनाम लय।
श्रीकृष्णचरणे ताँर प्रेम उपजय॥"

(अ॰ २०/२६)

इस प्रकार जो कृष्णनाम ग्रहण करता है, उसका श्रीकृष्णक चरणकमलोंमें प्रेम उत्पन्न होता है।

श्रीरघुनाथदास गोस्वामीने भी श्रीहरिनाम महामन्त्रकी व्याख्याके प्रारम्भमें लिखा है—

"एकदा कृष्णविरहाद् ध्यायन्ती प्रियसङ्गमम्।
मनोवाष्पनिरासार्थं जल्पतीदं मुहुर्मुहुः॥

हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे।
हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे॥

यानि नामानि विरहे जजाप वार्षभानवी।
तान्येव तद्भावयुक्तो गौरचन्द्रो जजाप ह॥

एक समय, श्रीकृष्णक
श्यामसुन्दरक
करनेक
हरे राम राम राम हरे हरे॥" इस 'महामन्त्र' का जप करने लगीं।
श्रीकृष्णक
किया था, श्रीराधाभावविभावित श्रीचैतन्य महाप्रभुने भी, उन्हीं नामोंका जप किया था।

श्रीचैतन्यमुखोद्गीर्णा हरे कृष्णेति वर्णकाः।
मज्जयन्तो जगत् प्रेम्णि विजयन्तां तदाह्वयाः॥"

(लघुभागवतामृत १/४)

श्रीचैतन्य महाप्रभुके श्रीमुखसे उच्चरित हरे कृष्ण आदि षोडश नामात्मक तथा बत्तीस अक्षरात्मक श्रीहरिनाम महामन्त्र, विश्वको कृष्णप्रेममें निमग्न करते हुए सर्वोपरि विराजमान रहें; उनकी जय हो, जय हो।

महामन्त्रकी व्याख्याएँ

'हरिः' 'कृष्णः' 'राम' इति नामत्रयात्मको 'महामन्त्रः'।
तस्मिन् संबोधनात्मकानि त्रीणि नामानि सन्ति।
तत्र त्रयाणाम्

माधुर्यमयी व्याख्या—

'महामन्त्र' हरि, कृष्ण और राम—इन तीन नामोंसे युक्त है। इसमें सम्बोधनात्मक तीन नाम हैं। उन तीनों नामोंकी माधुर्यमयी व्याख्या इस प्रकार है—

विज्ञाप्य भगवत्तत्त्वं चिद्घनानन्दविग्रहम्।
हरत्यविद्यां तत्कार्यमतो हरिरिति स्मृतः॥

सच्चिदानन्द-विग्रहवाले भगवान् अपने तत्त्वको भलीभाँति समझा कर, जीवकी अविद्याको एवं उस अविद्याक
रहते हैं; अतः वे 'हरि' नामसे स्मरण किये जाते हैं।

आनन्दैकसुखः श्रीमान् श्यामः कमललोचनः।
गोक

एकमात्र आनन्दरसविग्रह, गोक
नन्दनन्दन श्रीश्यामसुन्दर ही 'कृष्ण' नामसे कहे जाते हैं।

वैदग्धीसारसर्वस्वं मूर्तलीलाधिदैवतम्।
श्रीराधां रमय नित्यं राम इत्यभिधीयते॥

(ब्रह्माण्डपुराण, उत्तरखण्ड ६/५५)

लीलाक
शिरोमणि श्रीकृष्ण श्रीमती राधिकाको निरन्तर रमण कराते रहते हैं अर्थात् आनन्दित करते रहते हैं, इसीलिए वे 'राम' नामसे अभिहित किये जाते हैं।

ऐश्वर्यमयी व्याख्या—

हरित त्रिविधं तापं जन्मकोटिशतोद्भवम्।
पापं च स्मरतां यस्मात्तस्माद्धरिरिति स्मृतः॥

भगवान् श्रीकृष्ण अपना स्मरण करनेवाले भक्तोंक
त्रिविध–तापों एवं कायिक–वाचिक–मानसिक तीनों प्रकारक
हर लेते हैं अतएव वे 'हरि' नामसे जाने जाते हैं।

कृषिर्भूवाचकः शब्दो णश्च निर्वृतिवाचकः।
तयोरैक्यं परं ब्रह्म कृष्ण इत्यभिधीयते॥

'कृष्' धातु आकर्षक सत्तावाचक है और 'ण' शब्द निर्वृति अर्थात्
आनन्दवाचक है। इन दोनोंक
परब्रह्म ही 'कृष्ण' नामसे कहे जाते हैं।

रमन्ते योगिनोऽनन्ते सत्यानन्दे चिदात्मनि।
इति रामपदेनासौ परंब्रह्माऽभिधीयते॥

नित्य आनन्द–स्वरूप एवं चिन्मय स्वरूपवाले जिन श्रीकृष्णमें योगीलोग रमण करते हैं अर्थात् क्रीड़ा करते हैं, तात्पर्य—उनक ध्यानसे आनन्द प्राप्त करते हैं, अतः परब्रह्मस्वरूप वे श्रीकृष्ण ही 'राम' नामसे कहे जाते हैं।

युगलस्मरणमयी व्याख्या—

मनो हरित कृष्णस्य कृष्णाह्लादस्वरूपिणी।
ततो हरा श्रीराधैव तस्याः संबोधनं हरे॥

श्रीकृष्णकी आह्लादस्वरूपिणी (ह्लादिनीशक्ति) श्रीराधा श्रीकृष्णक चित्तको हर लेती हैं, अतः श्रीराधा ही 'हरा' नामसे कही जाती हैं। 'हरा' शब्दका सम्बोधनमें 'हरे' रूप बनता है।

अपगृह्य त्रपां धर्मं धैर्यं मानं व्रजस्त्रियः।
वेणुना कर्षति गृहात् तेन कृष्णोऽभिधीयते॥

व्रजराजक
हरकर, अपनी वंशीक
आक षत कर लेते हैं; अतएव वे 'कृष्ण' नामसे अभिहित किये जाते हैं।

रमयत्यनिशं रूप-लावण्यैर्व्रजयोषिताम्।
मनः पंचेन्द्रियाणीह रामस्तस्मात् प्रकीर्तितः॥

वे ही श्रीकृष्ण अपने रूप-लावण्य आदिसे व्रजाङ्गनाओंक
एवं इन्द्रियोंको निरन्तर आनन्दित करते रहते हैं, इसी कारण वे 'राम' नामसे कहे जाते हैं।

श्रीजीवगोस्वामिकृता 'महामन्त्र'-व्याख्या—

सर्वचेतोहरः कृष्णस्तस्य चित्तं हरत्यसौ।
वैदग्धीसारविस्तारैरतो राधा हरा मता॥१॥

हरे—श्रीकृष्णचन्द्र अपने लोकोत्तर सौन्दर्यसे, सभीक
हरनेवाले हैं; किन्तु श्रीमती राधिका अपने श्रेष्ठ चातुर्यक
श्रीकृष्णक
जाती हैं। 'हरा' शब्दका सम्बोधनक
है॥१॥

कर्षति स्वीयलावण्यमुरलीकलनिःस्वनैः।
श्रीराधां मोहनगुणाऽलंकृतः कृष्ण ईर्यते॥२॥

कृष्ण—भुवनको मोहित कर लेनेवाले गुणोंसे अलंकृत श्रीहरि अपने लावण्य (सौन्दर्य) एवं मुरलीकी मधुरध्वनिक
श्रीराधिकाको अपनी ओर आकर्षित करते रहते हैं, अतः इसलिए उन्हें 'कृष्ण' नामसे पुकारा जाता है॥२॥

श्रूयते नीयते रासे हरिणा हरिणेक्षणा।
एकाकिनी रहःक

हरे—महापुरुषोंक
राधिका श्रीकृष्णक
अक
कही जाती हैं, जिनका सम्बोधनमें 'हरे' रूप बनता है॥३॥

अङ्गश्यामलिमस्तोमैः श्यामलीकतकाञ्चनः।
रमते राधया सार्धमतः कृष्णो निगद्यते॥४॥

कृष्ण—अपने श्रीअङ्गकी श्यामकान्तिक
सुवर्ण अर्थात् तप्त कञ्चन गौराङ्गी श्रीमती राधाको भी श्यामवर्णका बना देते हैं, अतः वे ही श्रीराधारमण श्यामसुन्दर 'कृष्ण' नामसे कहे जाते हैं॥४॥

कृत्वारण्ये सरः श्रेष्ठं कान्तयानुमतस्तया।
आकृष्य सर्वतीर्थानि तज्ज्ञानात् कृष्ण ईर्यते॥५॥

कृष्ण—अपनी कान्ता श्रीराधिकाकी इच्छाक
गोवर्धनक
प्रकटकर उसमें सब तीर्थोंको आकर्षित किया था, इस गूढ़ रहस्यको जानकर ही, विज्ञजन उन्हें 'कृष्ण' नामसे अभिहित करते हैं॥५॥

कृष्यते राधया प्रेम्णा यमुनातटकाननम्।
लीलया ललितश्चापि धीरैः कृष्ण उदाहृतः॥६॥

कृष्ण—धीर ललित नायक श्रीकृष्ण श्रीमती राधाक
लोकोत्तर प्रेम तथा उनक
यमुनातटवर्ती श्रीवृन्दावनक
हैं, इसलिए धीर जन उन्हें 'कृष्ण' कहते हैं॥६॥

हृतवान् गोक
श्रीहरिस्तं रसादुच्चै रायतीति हरा मता॥७॥

हरे—व्रजमें निवास करते समय श्रीकृष्णने जिस समय वृषरूपधारी बलिष्ठ अरिष्टासुरक
आनन्दोल्लासपूर्वक उच्चस्वरसे उन्हें 'हरि-हरि' कहकर पुकारनेवाली श्रीराधा 'हरा' नामसे जानी जाती हैं। 'हरा' शब्दका सम्बोधनमें 'हरे' रूप बनता है॥७॥

ह्यस्फुटं रायति प्रीतिभरेण हरिचेष्टितम्।
गायतीति मता धीरैर्हरा रसविचक्षणैः॥८॥

हरे—श्रीहरिकी लीलाओंको कभी अस्पष्ट स्वरमें तथा कभी प्रीतिकी अधिकताक
रसविवेचनमें अभिज्ञपण्डितोंक
सम्बोधनमें 'हरे' रूप बनता है॥८॥

रसावेशपरिस्त्रस्तां जहार मुरलीं हरेः।
हरेति कीर्तिता देवी विपिने क

हरे—वृन्दावनमें क्रीड़ापरायणा श्रीमती राधिकाने, रसक
श्रीकृष्णक
राधिकादेवी 'हरा' नामसे कही जाती हैं, जिसक
बनता है॥९॥

गोवर्धनदरीक
श्रीराधां रमयामास रामस्तेन मतो हरिः॥१०॥

राम—आलिङ्गन करनेमें चतुरशिरोमणि श्रीकृष्णने, गोवर्धनक
गुफारूपी-निक
'राम' नामसे जाने जाते हैं॥१०॥

हन्ति दुःखानि भक्तानां राति सौख्यानि चान्वहम्।
हरा देवी निगदिता महाकारुण्यशालिनी॥११॥

हरे—महाकारुण्यशालिनी देवी राधिका भक्तोंक
हर लेती हैं एवं प्रतिदिन सुखोंको प्रदान करती हैं, अतएव वे 'हरा' नामसे जानी जाती हैं, जिनका सम्बोधनमें 'हरे' रूप बनता है॥११॥

रमते भजते चेतः परमानन्दवारिधौ।
अत्रेति कथितो रामः श्यामसुन्दरविग्रहः॥१२॥

राम—भजन करनेवाले भक्तोंका मन, परमानन्दसिन्धु श्रीकृष्णमें रमण करता है, इस कारणसे श्यामसुन्दर विग्रहवाले श्रीकृष्ण ही यहाँपर 'राम' नामसे अभिहित होते हैं॥१२॥

रमयत्यच्युतं प्रेम्णा निक
रामा निगदिता राधा रामो युक्तस्तया पुनः॥१३॥

राम—श्रीमती राधिका निक
प्रदान करती हैं, अतएव 'रमयति—आनन्दयति' इस व्युत्पत्तिक
अनुसार उन्हींका नाम 'रामा' है। रामा अर्थात् श्रीराधाक
सम्मिलित होनेक

रोदनैर्गोक
विशोषयति तेनोक्तो रामो भक्तसुखावहः॥१४॥

राम—जिन्होंने व्रजवासियोंक
सम्पूर्ण रूपसे पानकर सुखा दिया था, भक्तोंको सुख प्रदान करनेवाले वही श्रीकृष्ण 'राम' कहलाते हैं॥१४॥

निहन्तुमसुरान् यातो मथुरापुरमित्यसौ।
तदागमद्रहःकामो यस्याः सासौ हरेति च॥१५॥

हरे—श्रीकृष्ण कंस आदि असुरोंको मारनेक
चले गये थे, पश्चात् श्रीराधिकासे एकान्तमें मिलनेकी अभिलाषासे पुनः व्रजमें आ गये; अतः मथुरा आदि धामसे व्रजकी ओर श्रीकृष्णका हरण करनेक
जाती हैं, जिनका सम्बोधनमें 'हरे' रूप बनता है॥१५॥

आगत्य दुःखहर्ता यो सर्वेषां व्रजवासिनाम्।
श्रीराधाहारिचरितो हरिः श्रीनन्दनन्दनः॥१६॥

हरे—जिन्होंने मथुरा एवं द्वारकासे आकर, समस्त व्रजवासियोंका दुःख हर लिया था; अतः श्रीमती राधिकाक
लीलाओंसे युक्त श्रीनन्दनन्दन ही 'हरि' नामसे अभिहित किये जाते हैं। 'हरि' शब्दका सम्बोधनमें 'हरे' ऐसा रूप बनता है॥१६॥

श्रीजीव गोस्वामी द्वारा विरचित 'महामन्त्र' की व्याख्या समाप्त।

श्रीगोपालगुरुगोस्वामिकृता 'महामन्त्र'-व्याख्या—

अज्ञानतत्कार्यविनाशहेतोः सुखात्मनः श्यामकिशोरमूर्तेः।
श्रीराधिकाया रमणस्य पुंसः स्मरन्ति नित्यं महतां महान्तः॥१॥

अज्ञान और उसक
करनेवाले, आनन्दस्वरूप, श्यामकिशोरमूर्त्ति, श्रीराधारमणको महाभागवतगण नित्य स्मरण करते हैं॥१॥

विलोक्य तस्मिन् रसिकं कृतज्ञं जितेन्द्रियं शान्तमनन्यचित्तम्।
कृतार्थयन्ते कृपया सुशिष्यं प्रदाय नामत्रययुक्तपद्यम्॥२॥

वे ही महाभागवतगण अपने योग्य-शिष्यको, उन्हीं श्रीराधारमणमें अनुरागी रसिक देखकर एवं उस शिष्यको कृतज्ञ, जितेन्द्रिय, शान्त तथा अनन्यचित्तवाला समझकर, कृपा करक
तीन नामोंसे युक्त पद, अर्थात् 'महामन्त्र' देकर कृतार्थ कर देते हैं॥२॥

महामन्त्रक

हरिर्हरति पापानि दुष्टचित्तैरपि स्मृतः।
अनिच्छयापि संस्पृष्टो दहत्येव हि पावकः॥३॥

बिना इच्छाक
है, उसी प्रकार दुष्टचित्तवाले मनुष्योंक
किये गये प्रभु उनक
नाम 'हरि' है॥३॥

विज्ञाप्य भगवत्तत्त्वं चिद्घनानन्दविग्रहम्।
हरत्यविद्यां तत्कार्यमतो हरिरिति स्मृतः॥४॥

अथवा सच्चिदानन्दविग्रह-स्वरूप भगवान् अपने नामका कीर्त्तन-स्मरण करनेवालोंक
और उसक
नामसे स्मरण किये जाते हैं॥४॥

अथवा सर्वेषां स्थावरजङ्गमादीनां तापत्रयं हरतीति हरिः। यद्वा दिव्यसद्गुणश्रवणकथनद्वारा सर्वेषां विश्वादीनां मनो हरतीति। यद्वा स्वमाधुर्येण कोटिकन्दर्पलावण्येन सर्वेषामवतारादीनां मनो हरतीति हरिः। हरिशब्दस्य संबोधने 'हे हरे'॥५॥

अथवा स्थावर-जङ्गम आदि सभी प्राणियोंक
तापोंको हर लेते हैं, इसी कारण वे 'हरि' कहलाते हैं, अथवा अपने अप्राकृत सद्गुणोंक
मनको हर लेते हैं; अतएव उनका नाम 'हरि' है, अथवा करोड़ों कामदेवोंसे भी अधिक अपने स्वाभाविक सौन्दर्य माधुर्यक
अवतारोंक
ही 'हरि' नामसे कहे जाते हैं। 'हरि' शब्दक
बनता है॥५॥

रासादिप्रेमसौख्यार्थे हरेर्हरति या मनः।
हरा सा गीयते सद्भिर्वृषभानुसुता परा॥६॥

स्वरूपप्रेमवात्सल्यैर्हरेर्हरति या मनः।
हरा सा कथ्यते सद्भिः श्रीराधा वृषभानुजा॥७॥

हरति श्रीकृष्णमनः कृष्णाह्लादस्वरूपिणी।
अतो हरेत्यनेनैव श्रीराधा परिगीयते।
इत्यादिना श्रीराधावाचक-हरा-शब्दस्य संबोधने हरे॥८॥

अथवा रास आदिक
स्वरूप-गुण-प्रेम-वात्सल्य आदिक
लेती हैं, अतः श्रीकृष्णकी ह्लादिनीशक्ति वृषभानुनन्दिनी श्रीराधा ही सज्जनोंक
इस प्रकार राधा-वाचक 'हरा' शब्दका सम्बोधनमें 'हरे' रूप बनता है॥६-८॥

महामन्त्रक

कृषिर्भूवाचकः शब्दो णश्च निर्वृतिवाचकः।
तयोरैक्यं परं ब्रह्म कृष्ण इत्यभिधीयते॥९॥

'कृष' धातु आकर्षक, सत्तावाचक और 'ण' शब्द निर्वृति अर्थात् आनन्दवाचक हैं। इन दोनोंक
परब्रह्म ही 'कृष्ण' नामसे अभिहित होते हैं॥९॥

ईश्वरः परमः कृष्णः सच्चिदानन्दविग्रहः।
अनादिरादिर्गोविन्दः सर्वकारणकारणम्॥१०॥

स्वयं अनादि तथा सबक
सच्चिदानन्द-विग्रहवाले परमेश्वर गोविन्द ही 'कृष्ण' नामसे कहे जाते हैं॥१०॥

आनन्दैकसुखः श्रीमान् श्यामः कमललोचनः।
गोक
कृष्णशब्दस्य संबोधने कृष्ण॥११॥

एकमात्र आनन्दरसविग्रह एवं गोक
लोचन, नन्दनन्दन श्रीमान् श्यामसुन्दर ही 'कृष्ण' नामसे कहे जाते हैं। 'कृष्ण' शब्दक

महामन्त्रक

राशब्दोच्चारणाद्देवि! बहिर्निर्यान्ति पातकाः।
पुनः प्रवेशकाले तु मकारश्च कपाटवत्॥१२॥

श्रीशङ्करजी पार्वतीक
अक्षर 'रा' शब्दक
जाते हैं, पुनः प्रवेश करनेक
किवाड़की तरह लग जाता है, अतः पाप पुनः प्रवेश नहीं कर पाते॥१२॥

रमन्ते योगिनोऽनन्ते सत्यानन्दे चिदात्मनि।
इति रामपदेनादः परंब्रह्माऽभिधीयते॥१३॥

योगिजन चिन्मय, अनन्त, सत्य और आनन्दस्वरूप जिस परतत्त्वमें रमण करते हैं, वह परतत्त्व परं ब्रह्म ही 'राम' नामसे कहा जाता है॥१३॥

वैदग्धीसारसर्वस्वं मूर्तलीलाधिदैवतम्।
श्रीराधां रमयन् नित्यं राम इत्यभिधीयते॥१४॥

रसमयी लीलाक
शेखर श्रीकृष्ण श्रीमती राधिकाको नित्य रमण कराते रहते हैं, अतः वे ही 'राम' नामसे कहे जाते हैं॥१४॥

श्रीराधायाश्चित्तमाकृष्य रमते क्रीडतीति रामः।
रामशब्दस्य संबोधने राम॥

तथा हि क्रमदीपिकायां चन्द्रं प्रति श्रीकृष्णः—
मम नामशतेनैव राधानाम सदुत्तमम्।
यः स्मरेत्तु सदा राधां न जाने तस्य कि

अथवा श्रीराधिकाक
साथ रमण करते हैं अर्थात् क्रीड़ा करते हैं, अतः वे श्रीकृष्ण ही 'राम' नामसे कहे जाते हैं। 'राम' शब्दक
रूप बनता है। देखो, 'क्रमदीपिका' में चन्द्रमाक
है कि मेरे सैंकड़ों नामोंकी अपेक्षा 'राधा' नाम श्रेष्ठ है अर्थात् मेरे नामका सैकड़ों बार जप करनेकी अपेक्षा श्रीराधाक
एक बार जप करना अधिक श्रेष्ठ है जो व्यक्ति, सदा सर्वदा श्रीराधाका स्मरण-कीर्त्तन करता है, उसे क्या फल मिलता है, इसे मैं भी नहीं जानता॥१५॥

पुनः महामन्त्रक

हरे—कृष्णस्य मनो हरतीति हरा राधा, तस्याः संबोधनने हे हरे।
श्रीमती राधिका श्रीकृष्णक
नामसे कही जाती हैं। उसक
है।

कृष्ण—राधाया मनः कर्षतीति कृष्णः, तस्य संबोधने हे कृष्ण।
जो श्रीराधाक
शब्दक

हरे—कृष्णस्य लोकलज्जाधैर्यादि सर्वं हरतीति हरा राधा, तस्याः संबोधने हे हरे। श्रीराधिका, श्रीकृष्णक
हर लेती हैं। इस कारण वे 'हरा' कहलाती हैं। 'हरा' शब्दका सम्बोधनमें 'हे हरे' ऐसा रूप बनता है।

कृष्ण—राधाया लोकलज्जाधैर्यादि सर्वं कर्षतीति कृष्णः, तस्य संबोधने हे कृष्ण। श्रीकृष्ण, राधिकाक
आकर्षित कर लेते हैं। इसी कारण वे 'कृष्ण' कहलाते हैं। 'कृष्ण' शब्दका सम्बोधनमें 'हे कृष्ण' ऐसा रूप बनता है।

कृष्ण—यत्र यत्र राधा तिष्ठति गच्छति वा तत्र तत्र सा पश्यति कृष्णो मां स्पृशति, बलात् कञ्चुकादिकं सर्वं हरतीति कृष्णः, तस्य संबोधने हे कृष्ण। श्रीराधिका जहाँ-जहाँ हैं अथवा जाती हैं, वे वहाँ-वहाँ देखती हैं कि श्रीकृष्ण मेरा स्पर्श कर रहे हैं तथा बलपूर्वक मेरी कञ्चुकी आदिको आकर्षण कर रहे हैं। इसी कारण वे 'कृष्ण' कहे जाते हैं। 'कृष्ण' शब्दक
है।

कृष्ण—पुनर्हर्षतां गमयति वनं कर्षतीति कृष्णः, तस्य संबोधने हे कृष्ण। वे श्रीराधाको हर्षित करते हैं एवं वंशी बजाकर वृन्दावनकी ओर आकर्षित करते हैं, इसीलिए 'कृष्ण' कहलाते हैं। 'कृष्ण' शब्दक सम्बोधनमें 'हे कृष्ण' ऐसा रूप बनता है।

हरे—यत्र कृष्णो गच्छति तिष्ठति वा तत्र तत्र पश्यति राधा ममाग्रे पार्श्वे सर्वत्र तिष्ठति विहरति इति हरा राधा, तस्याः संबोधने हे हरे। श्रीकृष्ण जिस स्थानमें जाते हैं या बैठते हैं, वे उस उस स्थानपर देखते हैं कि, श्रीराधा मेरे आमने-सामने, मेरे अगल-बगल चारों ओर विराजमान हैं—सभी ओर विहार कर रही हैं। अतएव वे 'हरा' कहलाती हैं। 'हरा' शब्दक
बनता है।

हरे—पुनस्तं कृष्णं हरति स्वस्थानमभिसारयतीति हरा राधा, तस्याः संबोधने हे हरे। वे ही पुनः श्रीकृष्णको हरती हैं, अर्थात् अपने सङ्केत-स्थानकी ओर श्रीकृष्णका अभिसार कराती हैं; अतः श्रीराधा ही 'हरा' नामसे कही जाती हैं। जिसक
रूप बनता है।

हरे—कृष्णं वनं हरति वनमागमयतीति हरा राधा, तस्याः संबोधने हे हरे। श्रीकृष्णको वनकी ओर हरती हैं, अर्थात् वृन्दावनकी ओर हरण करती हैं; अतः श्रीराधा ही 'हरा' कहलाती हैं। जिसक
'हे हरे' ऐसा रूप बनता है।

राम—रमयति तां नर्मनिरीक्षणादिनेति रामः, तस्य संबोधने हे राम। श्रीकृष्ण अपने हास–परिहास, दर्शन आदिसे श्रीराधिकाको रमण कराते हैं अर्थात् आनन्दित करते हैं; अतः उनका ही नाम 'राम' है। जिसक

हरे—तात्कालिकं धैर्यावलंबनादिकं कृष्णस्य हरतीति हरा राधा, तस्याः संबोधने हे हरे। श्रीकृष्णक
आदिको हरण कर लेती हैं, अतः श्रीराधा ही 'हरा' हैं। जिसक सम्बोधनमें 'हे हरे' ऐसा रूप बनता है।

राम—चुम्बन–स्तनाकर्षणालिङ्गनादिभिः रमते इति रामः, तस्य संबोधने हे राम। श्रीकृष्ण चुम्बन, स्तन–आकर्षण एवं आलिङ्गन आदिक
वे ही 'राम' नामसे कहे जाते हैं। जिसक
रूप बनता है।

राम—पुनस्तां पुरुषोचितां कृत्वा रमयतीति रामः, तस्य संबोधने हे राम। श्रीकृष्ण राधिकाको पुरुषाकार बनाकर उसक
रमण करते हैं, अतएव वे 'राम' नामसे कहे जाते हैं। जिसक सम्बोधनमें 'हे राम' ऐसा रूप बनता है।

राम—पुनस्तत्र रमते इति रामः, तस्य संबोधने हे राम। वहाँपर पुनः–पुनः उसी प्रकार रमण करते हैं, इसी कारण वे 'राम' नामसे कहे जाते हैं। जिसक

हरे—पुनः रासान्ते कृष्णस्य मनो हृत्वा गच्छतीति हरा राधा, तस्याः संबोधने हे हरे। रासलीलाक

कर चली जानेवाली राधा ही 'हरा' नामसे कही जाती हैं। जिसक
सम्बोधनमें 'हे हरे' ऐसा रूप बनता है।

हरे—राधाया मनो हृत्वा गच्छतीति हरिः कृष्णः, तस्य संबोधने हे हरे। श्रीकृष्ण भी रासलीलाक
चले जाते हैं, अतः वे ही 'हरि' कहलाते हैं। जिसक
'हे हरे' ऐसा रूप बनता है।

श्रीगोपाल गुरु गोस्वामी द्वारा विरचित
'महामन्त्र' की व्याख्या समाप्त।

श्रीरघुनाथदासगोस्वामिकृता 'महामन्त्र'-व्याख्या—

एकदा कृष्णविरहाद् ध्यायन्ती प्रियसङ्गमम्।
मनोवाष्पनिरासार्थं जल्पतीदं मुहुर्मुहुः॥

हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे।
हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे॥

हे हरे—स्वनामश्रवणमात्रेण स्वमाधुर्येण च मच्चेतो हरसि।

तत्र हेतुः हे कृष्ण इति। कृष् शब्दस्य सर्वार्थः णश्च आनन्दस्वरूप इति स्वार्थे णः। सच्चिदानन्दस्वरूपक इति स्वीयेन सार्वदिकपरमानन्देन सर्वाधिकपरमानन्देन वा प्रलोभ्य इति भावः।

ततश्च हे हरे—वंशीवादने मम धैर्यलज्जागुरुभयादिकमपि हरसि।

ततश्च हे कृष्ण—स्वाङ्गसौरभेण मां स्वगृहेभ्यो वृन्दावनं प्रत्याकर्षसि।

ततश्च हे कृष्ण—वनं प्रविष्टाया मे कंचुकीं सहसैवागत्य कर्षसि।

ततश्च हे कृष्ण—स्वाङ्गलावण्येन सर्वाधिकानन्देन च मां प्रलोभ्य मत् क

ततश्च हे हरे—स्वबाहुनिबद्धां मां पुष्पशय्यां प्रति हरसि।

ततश्च हे हरे—तत्र निवेशिताया मे अन्तरीयमपि बलाद्धरसि।

हे हरे—अन्तरीयवसनहरणमिषेणात्मविरहपीडां सर्वामेव हरसि।

ततश्च हे राम—स्वच्छन्दं मयि रमसे।

ततश्च हे हरे—यदवशिष्टं मे किञ्चिद् वाम्यमासीत्तदपि हरसि।

ततश्च हे राम—मां रमयसि स्वस्मिन् पुरुषायितामपि करोषि।

ततश्च हे राम—रमणीयचूडामणे! तव नवीनवक्त्रमाधुर्यमपि निःशंकं तदात्मानं तव रामणीयकं मन्नयनाभ्यां द्वाभ्यामेवाऽऽस्वाद्यते इति भावः।

ततश्च हे राम—रमणं रमः, रमस्य भावः रामः; हे राम! तदा त्वं साक्षाद् रमणाधिदेवभावरूपोऽप्राकृतकन्दर्प एव भवसि, अथवा न क

रतिमूर्तिरिव त्वं भवसीति भावः।

ततश्च हे हरे—मच्चेतनामृगीमपि हरसि, मामानन्दमूर्च्छितां करोषीति भावः।

यतो हे हरे—सिंहस्वरूप! तदापि त्वं रतिकर्मणि सिंह इव महाप्रागल्भ्यं प्रकटयसीति भावः।

एवंभूतेन त्वया प्रेयसा वियुक्ताऽहं क्षणमपि कल्पकोटिमिव यापयितुं कथं प्रभवामीति स्वयमेव विचारय इति नाम षोडशकस्याऽभिप्रायः। ततश्च नामभिश्चुम्बकैरिव कृष्णः कृष्णया सहसैवाऽऽकृष्टो मिलितपरमानन्द एव। तस्याः स्वसखीनां तत्परिवारवर्गस्य तद्भावसाधकानामर्वाचीनानामपि श्रीराधाकृष्णो मानसं संपूरयतः।

इति श्रीरघुनाथदासगोस्वामिविरचिता 'महामन्त्र'-व्याख्या समाप्ता।

श्रीसच्चिदानन्दभक्तिविनोदठक्क

हे हरे—मच्चित्तं हृत्वा भवबन्धनान्मोचय। हे हरे! मेरे चित्तको हरकर, मुझे भवबन्धनसे विमुक्त कर दीजिये।

हे कृष्ण—मच्चित्तमाकर्ष। हे कृष्ण! मेरे चञ्चल चित्तको अपनी ओर आकर्षित कर लीजिये।

हे हरे—स्वमाधुर्येण मच्चित्तं हर। हे हरे! अपने स्वाभाविक माधुर्यसे मेरा चित्त हर लीजिये।

हे कृष्ण—स्वभक्तद्वारा भजनज्ञानदानेन मच्चित्तं शोधय। हे कृष्ण! भक्तितत्त्ववेत्ता अपने भक्तक
चित्तको शुद्ध बनाइये।

हे कृष्ण—नामरूपगुणलीलादिषु मन्निष्ठां क हे कृष्ण! अपने नाम-रूप-गुण-लीला आदिकोंमें मेरी निष्ठा उत्पन्न करा दीजिये।

हे कृष्ण—रुचिर्भवतु मे। हे कृष्ण! आपक
आदिमें मेरी रुचि उत्पन्न हो जाये।

हे हरे—निजसेवायोग्यं मां क हे हरे! मुझे आप अपनी सेवाक योग्य बना लीजिये।

हे हरे—स्वसेवामादेशय। हे हरे! मुझे सेवाक
सेवाका आदेश दीजिये।

हे हरे—स्वप्रेष्ठेन सह स्वाभीष्टलीलां श्रावय। हे हरे! अपने प्रियतम सहितकी गयी अपनी अभीष्ट लीलाओंका मुझे श्रवण कराइये।

हे राम—प्रेष्ठया सह स्वाभीष्टलीलां मां श्रावय। हे राम! हे राधिकारमण! प्रियतमा श्रीराधिकाक
लीलाओंको मुझे श्रवण कराइये।

हे हरे—स्वप्रेष्ठेन सह स्वाभीष्टलीलां मां दर्शय। हे हरे! हे श्रीमती राधिक
लीलाओंका दर्शन कराइये।

हे राम—प्रेष्ठया सह स्वाभीष्टलीलां मां दर्शय। हे राम! हे राधिकारमण! आप मुझे अपनी प्रियतमाके साथ अपनी अभीष्ट लीलाओंको दर्शन कराइये।

हे राम—नामरूपगुणलीलास्मरणादिषु मां योजय। हे राम! आप मुझे कृपया अपने नाम, रूप, गुण, लीला एवं स्मरण आदिमें नियुक्त कर लें।

हे राम—तत्र मां निजसेवायोग्यं क हे राम! उस लीलामें मुझे अपनी सेवाक

हे हरे—मां स्वाङ्गीकृत्य रमस्व। हे हरे! मुझे अङ्गीकार करक मेरे साथ रमण कीजिये अर्थात् मुझे आनन्दित कीजिये।

हे हरे—मया सह रमस्व। हे हरे! मेरे साथ रमण कीजिये अर्थात् मेरे साथ विहार कीजिये।

श्रीसच्चिदानन्द भक्तिविनोद ठाक
ग्रन्थोंमें उद्धृत 'महामन्त्र' की व्याख्या समाप्त।

पदकल्पतरुमें 'महामन्त्र' की व्याख्या

नर हरिनाम अन्तरे अछु भावह हबे भवसागरे पार।
धर रे श्रवणे नर हरिनाम सादरे चिन्तामणि उह सार॥

अरे भाई! अपने हृदयमें इस हरिनामका किञ्चित् अनुभव कर पानेसे ही तुम भवसागरसे पार हो जाओगे। इसलिए तुम चिन्तामणिक भी सारस्वरूप इस हरिनामको अत्यधिक आदरपूर्वक अपनी श्रवणेन्द्रियमें धारण करो॥१॥

यदि कृत-पापि आदरे कभु मन्त्रक-राज श्रवणे करे पान।
श्रीकृष्णचैतन्य बले हय तछु दुर्गम पाप ताप सह त्राण॥

श्रीकृष्णचैतन्य महाप्रभु कहते हैं कि यदि कोई पापी व्यक्ति कभी एक बार भी आदरपूर्वक इस मन्त्रराज (महामन्त्र) का श्रवणेन्द्रिय द्वारा पान करता है, तो उसक
आध्यात्मिक, आधिदैविक तथा आधिभौतिक ताप सहित त्राण हो जाता है॥२॥

करह गौर-गुरु-वैष्णव-आश्रय लह नर हरिनाम-हार।
संसारे नाम लइ सुकृति हइया तरे आपामर दुराचार॥

अरे भाई! गुरु-वैष्णव और श्रीगौराङ्ग महाप्रभुका आश्रय ग्रहण करक
तथा दुराचारी व्यक्ति भी इस नामक
संसारसे तर जाते हैं॥३॥

इथे कृत-विषय-तृष्ण पहुँ-नाम-हारा यो धारणे श्रम-भार।
क

विषयोंक
क
साधनोंमें लगे रहनेक
मैं अब तक भी इस संसाररूपी कारागारमें पड़ा हूँ॥४॥

(पदकल्पतरु। गौरपदतरङ्गिणी तरङ्ग १, उच्छ्वास २, पद ५९, पृष्ठ १५)

इस कीर्त्तनमें सन्निहित हरे कृष्ण महामन्त्र

	१				३			
नर	ह	रि–नाम अन्त	रे	अछु भावह	ह	बे भवसाग	रे	पार।
धर	रे	श्रवणे नर	ह	रि–नाम साद	रे	चिन्तामणि उ	ह	सार॥
यदि	कृ	त–पापि आद	रे	कभु मंत्रक–	रा	ज श्रवणे क	रे	पान।
श्रीकृ	ष्ण	चैतन्य बले	ह	य तछु दुर्ग	म	पाप ताप स	ह	त्राण॥
कर	ह	गौर–गुरु– वै	ष्ण	व आश्रय ल	ह	नर हरिना	म	हार।
संसा	रे	नाम लइ सु	कृ	ति हइया त	रे	आपामर दु	रा	चार॥
इथे	कृ	त–विषय– तृ	ष्ण	पहुँ–नाम–हा	रा	यो धारणे श्र	म	भार।
क								गार॥
			२				४	

हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे।
हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे॥
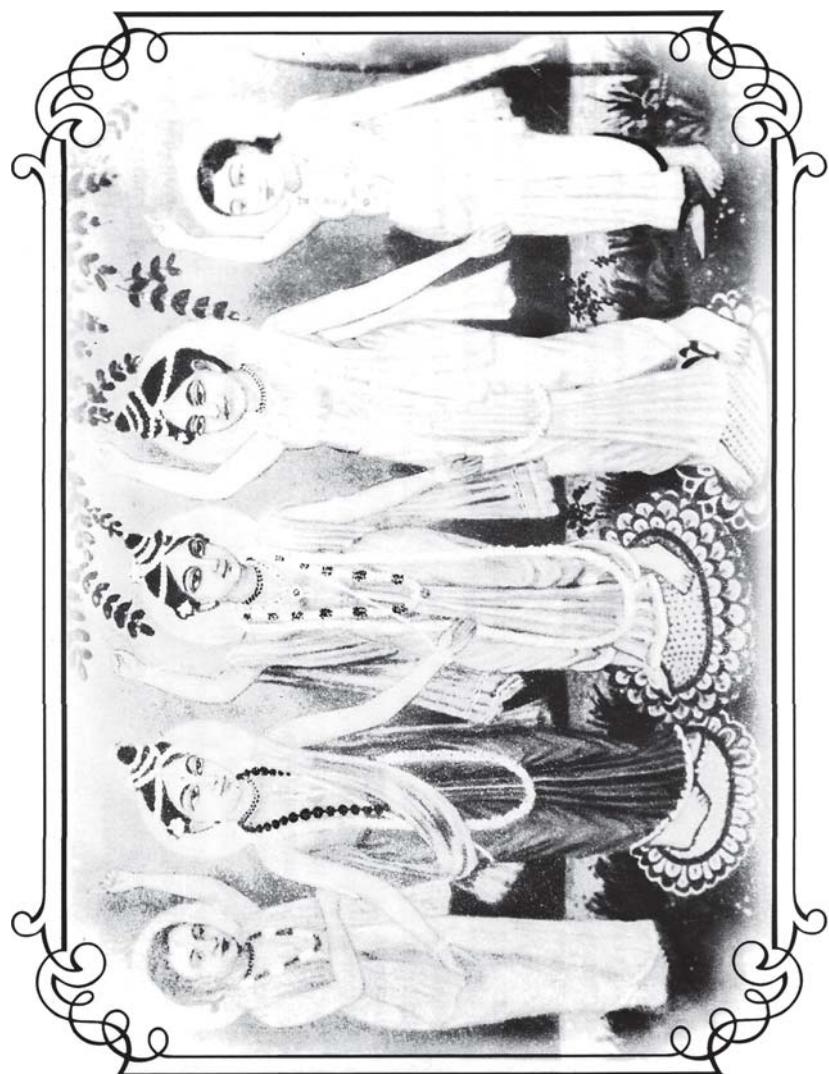
श्रीहरिनामका माहात्म्य

शास्त्रोंमें श्रीभगवन्नामकी महिमाका प्रचुर वर्णन पाया जाता है। यहाँ उनमेंसे क

नामका स्वरूप—

नाम चिन्तामणिः कृष्णश्चैतन्य-रसविग्रहः।
पूर्णः शुद्धो नित्यमुक्तोऽभिन्नत्वान्नामनामिनोः॥१॥

(भ० र० सि० १/२/१०८)

'कृष्णनाम' चिन्तामणिस्वरूप तथा स्वयं कृष्ण चैतन्य-रस-विग्रह, पूर्ण, मायातीत एवं नित्यमुक्त है, क्योंकि नाम और नामीमें भेद नहीं हैं॥१॥

कलियुगमें नामही सर्वसिद्धिदाता है—

कलेर्दोषनिधे राजन्नस्ति ह्येको महान् गुणः।
कीर्त्तनादेव कृष्णस्य मुक्तसङ्गः परं व्रजेत्॥२॥

हे राजन्! कलियुग दोषोंका खजाना है, फिर भी इसमें एक बहुत बड़ा गुण है। वह गुण यही है कि कलियुगमें भगवान् श्रीकृष्णका सङ्कीर्त्तन करनेमात्रसे ही समस्त आसक्तियाँ छूट जाती हैं और भगवान्की प्राप्ति हो जाती है॥२॥

कृते यद्ध्यायतो विष्णुं त्रेतायां यजतो मखैः।
द्वापरे परिचर्यायां कलौ तद्धरिकीर्त्तनात्॥३॥

(श्रीमद्भा० १२/३/५१-५२)

सत्युगमें भगवान्क
उनकी आराधना करनेसे और द्वापरमें विधिपूर्वक उनकी पूजासे जो फल मिलता है, वह कलियुगमें क
अनायास ही प्राप्त हो जाता है॥३॥

ध्यायन् कृते यजन् यज्ञैस्त्रेतायां द्वापरेऽर्चयन्।
यदाप्नोति तदाप्नोति कलौ सङ्कीर्त्य क

(पाद्मोत्तर खण्डक

सत्ययुगमें ध्यानक
द्वापरमें परिचर्याक
हरिनाम-कीर्त्तन करनेसे ही वह फल प्राप्त हो जाता है॥४॥

कलिकाले नामरूपे कृष्ण अवतार।
नाम हैते हय सर्व जगत्-निस्तार॥

नाम बिना कलिकाले नाहि आर धर्म।
सर्वमन्त्रसार नाम एइ शास्त्र मर्म॥५॥

(चै॰ च॰ आ॰ १७/२२, ७/७४)

कलियुगमें श्रीकृष्ण ही नामक
ही समस्त जगत्का उद्धार होता है। कलियुगमें नामक
कोई धर्म नहीं हैं। समस्त मन्त्रोंका सार हरिनाम है, यही सभी शास्त्रोंका मर्म है॥५॥

नाम-माहात्म्य-वर्णनमें प्राचीन आचार्यवृन्द—

अंहः संहरतेऽखिलं सकृदुदयादेव-सकल-लोकस्य।
तरणिरिव तिमिर-जलधिं जयति जगन्मङ्गलं हरेर्नाम॥६॥

(पद्यावली १६ संख्याधृत श्रीधरस्वामीकृत श्लोक)

जगन्मङ्गल हरिनामकी जय हो। जिस प्रकार सूर्य उदित होकर अन्धकारका विनाश करता है, उसी प्रकार हरिनाम एकबार मात्र उदित होनेपर लोगोंक

आकृष्टिः कृतचेतसां सुमनसामुच्चाटनं चांहसा-
माचण्डालममूकलोकसुलभो वश्यश्च मुक्तिश्रियः।
नो दीक्षां न च सत्क्रियां न च पुरश्चर्यां मनागीक्षते
मन्त्रोऽयं रसनास्पृगेव फलति श्रीकृष्णनामात्मकः॥७॥

(पद्यावली १८)

त्रिगुणातीत मुक्त क
वाक्शक्तिमान् व्यक्ति तकको सुलभ, मुक्तिरूप ऐश्वर्यको वशमें करनेवाला, ऐसा श्रीकृष्णनामस्वरूप 'महामन्त्र' जिह्वापर स्पर्श करते ही फल प्रदान करता है, दीक्षादि सत्कार्य या पुरश्चरण—इन सबकी किञ्चित्मात्र भी अपेक्षा नहीं करता॥७॥

ब्रह्म साक्षात्कारकी अपेक्षा नामोच्चारणकी महिमा अधिक है—

यद्ब्रह्म-साक्षात्-कृति-निष्ठयापि विनाशमायाति विना न भोगैः।
अपैति नाम-स्फुरणेन तत्ते प्रारब्ध कर्मेति विरौति वेदः॥८॥

(श्रीरूपगोस्वामीकृत श्रीकृष्णनाम-स्तोत्रका चौथा श्लोक)

हे नाम प्रभो! अवच्छिन्न तैलधारावत् ब्रह्म चिन्ताक
ब्रह्म-साक्षात्कारकी निष्ठा प्राप्त करनेपर भी जिस प्रारब्ध कर्मको भोगना ही पड़ता है, वह प्रारब्ध कर्म आपकी स्फूर्तिमात्रसे अर्थात् भक्तोंकी जिह्वापर स्फुरण होनेमात्रसे विनष्ट हो जाता है। इस बातको वेद उच्चस्वरसे पुनः-पुनः कहते हैं॥८॥

नामकीर्त्तनकी श्रेष्ठता—

अघच्छित्-स्मरणं विष्णोर्वह्वायासेन साध्यते।
ओष्ठस्पन्दनमात्रेण कीर्त्तनस्तु ततो वरम्॥९॥

(ह॰ भ॰ वि॰ ११/२३६, वैष्णव चिन्तामणिवाक्य)

विष्णुका स्मरण पापोच्छेदक होनेपर भी वह प्रचुर यत्न द्वारा ही पूरा होता है। किन्तु ओष्ठ स्पन्दनमात्रसे (अनायास ही) जो विष्णुका कीर्त्तन होता है, वह स्मरणसे भी श्रेष्ठ है। (क्योंकि, इस प्रकार नामकीर्त्तन अथवा नामाभासक
हुआ जा सकता है)॥९॥

ध्यान-पूजादिसे नामकीर्त्तनकी श्रेष्ठता—

जयति जयति नामानन्दरूपं मुरारे-
र्विरमितनिजधर्मध्यानपूजादियत्नम् ।

कथमपि सकृदात्तं मुक्तिदं प्राणिनां यत्
परमममृतमेकं जीवनं भूषणं मे॥१०॥
(बृ॰ भा॰ १/१/९)

जिसक
जाता है, ऐसे आनन्दस्वरूप मुरारीक
यह नाम जिस किसी भी प्रकारसे लिए जानेपर (नामाभासमात्रसे ही) प्राणियोंको मुक्ति प्रदान करता है एवं यही एकमात्र परम अमृतस्वरूप है, यह मेरा जीवन एवं भूषण है॥१०॥

येन जन्मशतैः पूर्वं वासुदेवः समर्चितः।
तन्मुखे हरिनामानि सदा तिष्ठन्ति भारत॥११॥
(ह॰ भ॰ वि॰ ११/२३७ शास्त्रवाक्य)

हे भरतवंश श्रेष्ठ! जिन्होंने शत-शत वर्ष पूर्व जन्मोंमें उचित (सम्यग्) रूपसे वासुदेवका अर्चन किया है, उनक
नाम नित्यकाल विराजमान रहता है॥११॥

नाममें देशकाल आदिका नियम नहीं है—

न देशनियमो राजन् न कालनियमस्तथा।
विद्यते नात्र सन्देहो विष्णोर्नामानुकीर्त्तने॥१२॥

कालोऽस्ति दाने यज्ञे च स्नाने कालोऽस्ति सज्जपे।
विष्णुः सङ्कीर्त्तने कालो नास्त्यत्र पृथिवीतले॥१३॥
(ह॰ भ॰ वि॰ ११ वि॰ २०६ संख्याधृत वैष्णव चिन्तामणि वाक्य)

हे राजन्! विष्णुक
कालका नियम नहीं है, यह निसन्देहपूर्वक कहा जाता है। दान, यज्ञ और अन्यान्य जपमें काल नियमका विचार है, किन्तु इस पृथ्वीपर विष्णु नामक
विधान नहीं है॥१२-१३॥

न देशनियमस्तस्मिन् न कालनियमस्तथा।
नोच्छिष्टादौ निषेधोऽस्ति श्रीहरेर्नाम्निलुब्धक॥१४॥

(ह० भ० वि० ११ वि० २०२, विष्णुधर्मोत्तरवाक्य)

हे लुब्धक! श्रीहरिक
नियम नहीं है। उच्छिष्ट मुखसे अथवा किसी भी प्रकारकी अशुचि अवस्थामें भी नामकीर्त्तन करना निषिद्ध नहीं है॥१४॥

मधुर-मधुरमेतन्मङ्गलं मङ्गलानां
सकलनिगमवल्ली-सत्फलं चित्स्वरूपम्।
सकृदपि परिगीतं श्रद्धया हेलया वा
भृगुवर नरमात्रं तारयेत् कृष्णनाम॥१५॥

(ह० भ० वि०-११ वि०-२३४ संख्याधृत स्कन्दपुराण वाक्य)

हरिनाम सब प्रकारक
भी सुमधुर हैं। वे निखिल श्रुति-लताओंक
हे भार्गवश्रेष्ठ! श्रद्धासे हो अथवा अवहेलनासे, मनुष्य यदि स्पष्ट रूपसे एकबार भी निरपराध होकर 'कृष्ण' नामका उच्चारण करे, तो वह नाम उसी समय मनुष्यको तार देता है॥१५॥

सभीक
एतन्निर्विद्यमानानामिच्छतामक
योगिनां नृप निर्णीतं हरेर्नामानुकीर्त्तनम्॥१६॥

(श्रीमद्भा० २/१/११)

हे राजन्! निर्वेद प्राप्त, ऐकान्तिक भक्त, स्वर्ग और मोक्ष आदिकी अभिलाषा रखनेवाले तथा आत्माराम योगियों आदि सभीक
श्रीहरिक
साधन और साध्य है। पूर्ववर्ती आचार्योंने ऐसे ही स्थिर सिद्धान्तकी घोषणा की है॥१६॥
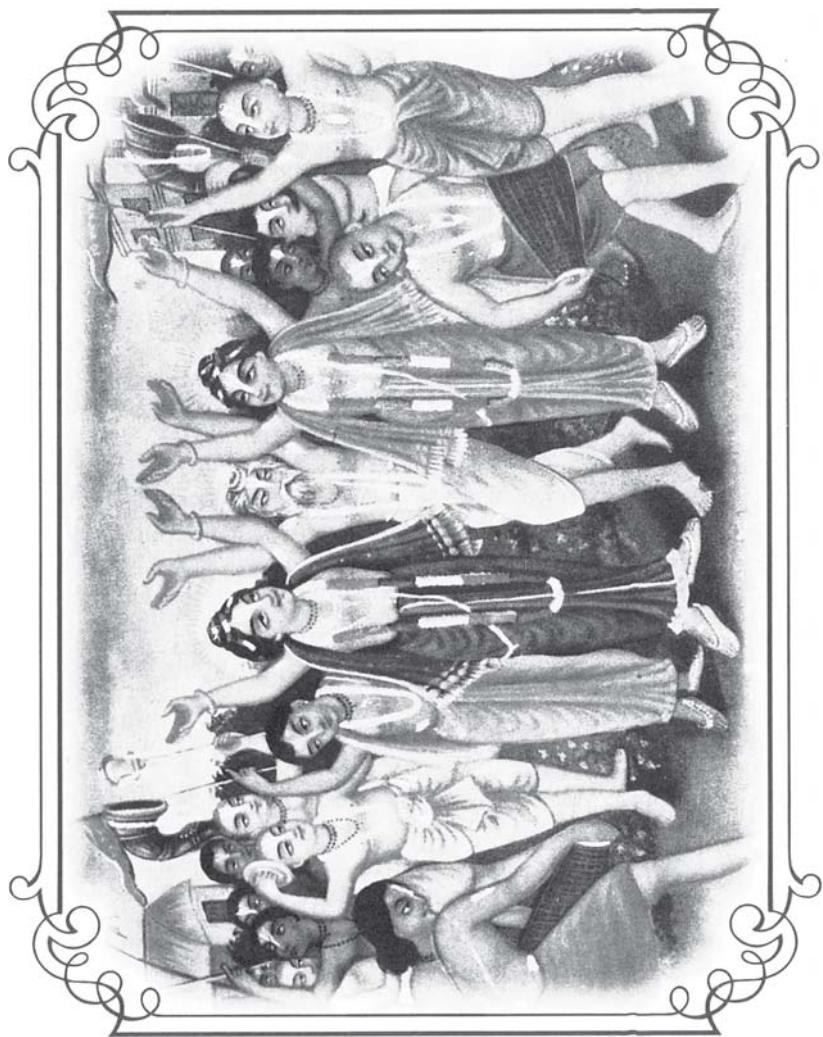
श्रीहरिनाम

(सच्चिदानन्द श्रील भक्तिविनोद ठाक

भवसमुद्र बड़ा ही दुस्तर है। परमेश्वरकी कृपाक
करना कठिन ही नहीं, असम्भव है। जीव जड़से श्रेष्ठ होनेपर भी स्वभावतः दुर्बल और पराधीन है। भगवान् ही जीवोंक
रक्षक, पालक और त्राता हैं। जीव अणु-चैतन्य हैं, अतएव परम चैतन्य भगवान्क
ही जीवोंक
जड़-जगत्में जीवोंकी स्थिति ठीक उसी प्रकार है, जिस प्रकार अपराधी व्यक्तिकी स्थिति कारागारमें होती है। भगवान्से विमुख होनेक
जीव मायाक
बद्ध जीव कहते हैं; क्योंकि वे माया द्वारा बँधे हुए होते हैं। इसक
विपरीत जो जीव भगवान्क
हैं। ऐसे जीवोंको मुक्त जीव कहते हैं। इस प्रकार अवस्था भेदसे अनन्त जीव दो भागोंमें विभक्त हैं—बद्ध जीव और मुक्त जीव।

बद्ध जीव साधन द्वारा भगवान्की कृपा प्राप्तकर, मायाकी सुदृढ़ रज्जुको तोड़नेमें समर्थ होते हैं। हमारे महामहिम (अतिशय महिमान्वित) महर्षियोंने अनेक छान-बीनक
साधन स्थिर किये हैं—कर्म, ज्ञान और भक्ति।

वर्णाश्रमधर्म, यज्ञ, तपस्या, दान, व्रत, योग—इन्हें शास्त्रोंमें कर्माङ्ग कहा गया है। इन विभिन्न कर्मोंक
कहे गये हैं। उन फलोंका पृथक्-पृथक् विचार करनेपर पता चलता है कि स्वर्ग-भोग, मृत्युलोकका भोग, रोगशान्ति तथा उच्च कर्म करनेक
उच्च कर्म करनेक
शेष समस्त प्रकारक

मर्त्यसुखभोग, ऐश्वर्य आदि फल—जिन्हें जीव कर्म द्वारा प्राप्त करते हैं—सभी नश्वर हैं। ये सभी भगवान्क
हो जाते हैं। इन फलोंक
इनसे और भी अधिक रूपमें कर्म वासनाएँ उत्पन्न होती हैं, जो माया-बन्धनको और भी अधिक सुदृढ़ कर देती हैं। उच्च कर्मोंका सुयोगरूप फल भी निरर्थक ही होता है, यदि उच्च कर्म वास्तवमें न किये जायें। श्रीमद्भागवतमें इस प्रकार कहते हैं—

धर्मः स्वनुष्ठितः पुंसां विष्वक्सेनकथासु यः।
नोत्पादयेद् यदि रतिं श्रम एव हि क

वर्णाश्रमधर्मका ठीक-ठीक अनुष्ठान करनेपर भी यदि मनुष्यके हृदयमें श्रीभगवान् और भागवतकी महिमाके श्रवण-कीर्त्तनके प्रति रुचि उत्पन्न न हो तो इस प्रकारका अनुष्ठान केवल श्रम ही है।

वर्णाश्रमधर्मका मूल तात्पर्य यह है कि स्वभावक
सांसारिक और शारीरिक कर्मोंक
रूपमें संसार और शरीर-यात्राका निर्वाह कर सक
हरिकथाक
वर्णाश्रमधर्मका उत्तम रूपसे पालन तो करता है, परन्तु हरि-कथामें उसकी रुचि नहीं होती, तो उसका सारा धर्मानुष्ठान व्यर्थका परिश्रम ही हो जाता है। कर्म द्वारा निश्चित रूपमें भवसमुद्रको पार नहीं किया जा सकता—इसे मैंने संक्षेपमें बतलाया।

ज्ञानको भी उच्च गति प्राप्त करनेमें साधन बतलाया गया है। ज्ञानका फल आत्मशुद्धि है। आत्मा जड़ातीत वस्तु है; परन्तु इस तत्त्वको भूलकर जीव जड़ाश्रित होकर कर्म-मार्गमें भटक रहे हैं। ज्ञान-चर्चा द्वारा यह जाना जाता है कि मैं जड़ नहीं—चित्-वस्तु हूँ। ऐसा ज्ञान स्वभावतः 'नैष्कर्म्य' कहलाता है। इसका कारण यह है कि इसमें चित्-वस्तुका क
नित्यधर्म—जो चिदास्वादन है, प्रारम्भ नहीं होता। इस अवस्थाको प्राप्त हुए जीव आत्माराम कहलाते हैं। परन्तु जब चिदास्वादनरूप

चित्-क्रिया प्रारम्भ हो जाती है, तब नैष्कर्म्य नहीं रहता। इसलिए देवर्षि श्रीनारदने कहा है—

नैष्कर्म्यमप्यच्युत-भाववर्जितं
न शोभते ज्ञानमलं निरञ्जनम्।

अर्थात् नैष्कर्म्यरूप निर्मल ज्ञान भी भगवान्की भक्तिसे स्निग्ध न होनेपर नितान्त उपेक्षणीय होता है।

श्रीमद्भागवतमें और भी कहते हैं—

आत्मारामश्च मुनयो निर्ग्रन्थाऽप्युरुक्रमे।
क

परम चैतन्य हरिमें एक ऐसा असाधारण गुण है, जो समस्त जड़मुक्त आत्माराम जीवोंको भी आकर्षणकर अपनी भक्तिमें लगा देता है।

अतएव कर्म उच्च कर्मका सुअवसर प्रदानकर और ज्ञान अपना नैष्कर्म्य-स्वरूप परित्यागकर जब भक्तिसाधन करानेमें नियुक्त होते हैं, तभी कर्म और ज्ञानको साधनाङ्ग कहा जा सकता है। उनकी स्वयं कोई साधनाङ्गता स्वीकृत नहीं है। इसलिए क
ही साधन कहा गया है। कर्म और ज्ञान भक्तिक
कहीं-कहीं साधनक
साधन-स्वरूप है। इस विषयमें श्रीमद्भागवतका निर्णय स्पष्ट है—

न साधयति मां योगो न सांख्यं धर्म उद्धव।
न स्वाध्यायस्तपस्त्यागो यथा भक्तिर्ममोर्जिता॥

हे उद्धव! कर्मयोग, सांख्योग, वर्णाश्रमधर्म, वेद-पाठ, तपस्या या वैराग्य मुझे प्रसन्न नहीं कर पाते, क
मुझे प्रसन्न करनेमें समर्थ है।

भगवान्को प्रसन्न करनेक
भी उपाय नहीं है। साधनभक्ति नौ प्रकारकी होती है—श्रवण, कीर्त्तन,

स्मरण, पादसेवन, अर्चन, वन्दन, दास्य, सख्य और आत्मनिवेदन। इनमेंसे श्रवण, कीर्त्तन और स्मरण—ये तीन प्रधान साधनाङ्ग हैं। भगवान्क
श्रवण, कीर्त्तन और स्मरण होता है। इनमें भी श्रीनाम ही आदि और सर्व बीज-स्वरूप हैं। अतएव हरिनाम ही सब प्रकारकी उपासनाओंक

हरेर्नाम हरेर्नाम हरेर्नामैव क
कलौ नास्त्येव नास्त्येव नास्त्येव गतिरन्यथा॥

कलियुगमें हरिनामक
'कलिकाल' शब्द द्वारा यह समझना होगा कि सभी समयोंमें हरिनामक बिना जीवोंकी गति नहीं है। विशेष रूपमें कलियुगमें दूसरे-दूसरे मन्त्रादि साधन दुर्बल होनेक
करना उचित है, क्योंकि हरिनाम सबसे अधिक वीर्यशाली हैं।
हरिनामक

नाम चिन्तामणिः कृष्णश्चैतन्यरसविग्रहः।
पूर्णः शुद्धो नित्यमुक्तोऽभिन्नत्वान्नामनामिनोः॥

श्रीजीव गोस्वामी इस श्लोककी व्याख्या करते हुए लिखते हैं—

एकमेव सच्चिदानन्द-रसादिरूपं तत्त्वं द्विधाविर्भूतमित्यर्थः।

श्रीकृष्णतत्त्व अद्वय सच्चिदानन्दस्वरूप हैं। उनका दो रूपोंमें आविर्भाव होता है—(१) नामीक
नामक
सर्वशक्तिमान हैं। शक्तिमान पुरुषक
प्रकाश हैं। शक्ति ही अपने आधाररूप पुरुषको दूसरेक
करती है। शक्तिक
और आह्वय-प्रभाव द्वारा कृष्णनाम विज्ञापित होता है। अतएव कृष्णनाम चिन्तामणि-स्वरूप, कृष्ण-स्वरूप और चैतन्य-रस विग्रह

स्वरूप हैं। नाम सर्वदा पूर्णस्वरूप हैं अर्थात् उनमें विभक्तियोंक
योगसे "कृष्णाय नारायणाय" इत्यादि मन्त्रादि निर्माणकी अपेक्षा नहीं
होती। कृष्णनाम उच्चारित होते ही चित्तत्त्वमें कृष्ण-रस अकस्मात्
उदित हो पड़ता है। नाम सदा विशुद्ध होते हैं अर्थात् वे जड़ीय
अक्षरोंकी भाँति जड़ाश्रय नहीं होते। नाम क
हैं। नाम सदा मुक्त होते हैं, अतएव नित्यमुक्त हैं, वे कभी भी
जड़ जिह्वा आदिसे उत्पन्न नहीं होते। जिन्होंने नाम-रसका पान किया
है, वे ही क
जो नाममें जड़त्वकी कल्पना करते हैं, स्वयं चैतन्यरसास्वादन करनेमें
असमर्थ हैं, वे इस व्याख्यासे सन्तुष्ट नहीं हो सकते। यदि यह
कहो कि हम निरन्तर जो नाम-उच्चारण करते हैं, वह जड़ीय
अक्षरोंको आश्रय करक
उत्पन्न वस्तु न कहकर नित्य मुक्त कैसे कहा जा सकता है? इस
बहिर्मुख तर्कक

अतः श्रीकृष्णनामादि न भवेद् ग्राह्यमिन्द्रियैः।
सेवोन्मुखे हि जिह्वादौ स्वयमेव स्फुरत्यदः॥

प्राकृत वस्तु ही प्राकृत इन्द्रियग्राह्य होती है। कृष्णनाम अप्राकृत
हैं। अतएव वे कदापि प्राकृत इन्द्रियग्राह्य नहीं हैं। तब जो नाम
जिह्वासे प्रकाशित होता है, वह क
तदुपयोगी इन्द्रियमें स्फूर्तिमात्र है। भक्त जिस समय आत्माकी अप्राकृत
रसनासे कृष्णनाम उच्चारण करते हैं, उस समय वह उच्चरित
परमतत्त्व प्राकृत रसनापर आविर्भूत होकर नृत्य करने लगता है।
आनन्दसे हास्य, स्नेहसे क्रन्दन, प्रीतिसे नृत्य जिस प्रकार अप्राकृत
रसकी इन्द्रियों तक व्याप्ति होती हैं, उसी प्रकार श्रीकृष्णनाम-रसकी
रसना तक व्याप्ति होती है। प्राकृत रसनासे कृष्णनाम उत्पन्न नहीं
होता। साधन कालमें जिस नामका अभ्यास किया जाता है, वह
यथार्थ नाम नहीं है। उसे छायानाम अथवा नामाभास कहा जा सकता

है। नामाभास करते-करते क्रमोन्नति द्वारा बहुधा अप्राकृत नाममें रुचि होती देखी गयी है। बाल्मीकि और अजामिलक
इस विषयमें ज्वलन्त दृष्टान्त हैं।

जीवकी नाममें रुचि न होनेका कारण अपराध है। जो अपराधरहित होकर कृष्णनाम ग्रहण करते हैं, उनक
चैतन्यरस-विग्रहरूप अप्राकृत श्रीहरिनामका उदय होता है। अप्राकृत नामका उदय होनेपर हृदय प्रफुल्लित हो उठता है, नेत्रोंसे अश्रुधारा-प्रवाहित होने लगती है तथा शरीरमें सात्त्विक विकार आविर्भूत होने लगते हैं। अतएव श्रीमद्भागवतमें ऐसा कहा गया है—

तदश्मसारं हृदयं वतेदं यद्गृह्यमाणैर्हरिनामधेयैः।
न विक्रियेताथ यदा विकारो नेत्रे जलं गात्ररुहेषु हर्षः॥

जीव जिस समय हरिनाम ग्रहण करते हैं, उस समय उनका हृदय निश्चित रूपमें विकृत होगा, आँखोंसे निश्चय ही अश्रुधारा प्रवाहित होगी तथा शरीरमें अवश्य ही रोमाञ्च होगा। जो कृष्णनाम उच्चारण तो करते हैं, परन्तु उनमें ऐसे विकार लक्षित नहीं होते, उनका हृदय अपराधक
चाहिये।

निरपराध होकर हरिनाम लेना साधकका नितान्त कर्त्तव्य है। अतएव अपराधसे बचनेक
ज्ञान होना आवश्यक है।

शास्त्रोंमें हरिनामक
है—(१) साधु-निन्दा, (२) शिव आदि देवताओंको भगवान्से पृथक् स्वतन्त्र मानना, (३) गुरुकी अवज्ञा करना, (४) वेदादि सत्-शास्त्रोंकी निन्दा करना, (५) हरिनाम-माहात्म्यको क
समझना, (६) हरिनाममें अर्थ कल्पना अर्थात् कृष्ण, राम आदि नाम कल्पित हैं, ऐसी धारणा रखना, (७) नामक
करना, (८) दूसरे-दूसरे शुभ कर्मोंक

(९) अश्रद्धालु व्यक्तिको हरिनामका उपदेश करना और (१०) नामका माहात्म्य श्रवण करक
साधुभक्तोंक
महाजनोंकी निन्दा करनेसे हरिनामक
जो हरिनामका आश्रय ग्रहण करेंगे, उन्हें सर्वप्रथम वैष्णव–अवज्ञाकी प्रवृत्तिको सर्वतोभावेन परित्याग करना चाहिये। वैष्णवोंक
प्रति सन्देह होनेपर साथ–ही–साथ निन्दा न करक
अनुसन्धान करनेकी चेष्टा करनी चाहिये। अतएव साधुजनोंक
श्रद्धा करना ही कर्त्तव्य है।

शिव आदि देवताओंको भगवान्‌से पृथक् समझना नामापराध कहा गया है। भगवत्–तत्त्व एक और अद्वितीय है। शिव आदि देवताओंकी भगवान्‌से पृथक् स्वतन्त्र कोई सत्ता नहीं है। शिव आदि देवताओंको भगवान्‌का गुणावतार अथवा भगवद्भक्त मानकर सम्मान करनेसे भेदज्ञान नहीं रहता। जो लोग महादेवको एक पृथक् अर्थात् स्वतन्त्र देवता मानकर शिव और विष्णुकी पूजा करते हैं, वे महादेवकी भगवत्ता स्वीकार नहीं करते हैं। इससे वे विष्णु और शिव दोनोंक
उन्हें इस प्रकारक

गुरुदेवकी अवज्ञा करना एक नामापराध है। जो नाम–तत्त्वकी सर्वोत्तमताकी शिक्षा देते हैं, उन्हें आचार्यरूपी भगवत्–प्रेष्ठ समझना चाहिये। उनक
करनी चाहिये।

कदापि सत्‌शास्त्रोंकी निन्दा नहीं करनी चाहिये। वेदादि शास्त्रोंमें भागवत धर्मका वर्णन है—श्रीनामका बहुत ही माहात्म्य बतलाया गया है। उन शास्त्रोंकी निन्दा करनेसे हरिनामापराध होता है। वेद आदि शास्त्रोंमें सर्वत्र ही हरिनामका माहात्म्य बतलाया गया है—

वेदे रामायणे चैव पुराणे भारते तथा।
आदावन्ते च मध्ये च हरिः सर्वत्र गीयते॥

इस प्रकारक
प्रीति हो सकती है?
क
माहात्म्य वर्णन किया गया है, वह क
जिनकी ऐसी धारणा है, वे नामापराधी हैं। ऐसे लोग हरिनाम करक
भी हरिनामका वास्तविक फल प्राप्त नहीं कर पाते। ऐसे लोग यह समझते हैं कि जिस प्रकार कर्मकाण्डमें रुचि उत्पन्न करनेक
लिए कर्मकाण्डकी बढ़ा चढ़ाकर प्रशंसा की गयी है, उसी प्रकार शास्त्रोंमें हरिनामकी भी बढ़ा-चढ़ा कर फल-श्रुति दी गयी है। ऐसा समझनेवाले बड़े दुर्भागे हैं। इसक
विश्वास इस प्रकार होता है—

एतन्निर्विद्यमानानामिच्छतामक
योगिनां नृप निर्णीतं हरेर्नामानुकीर्त्तनम्॥

संसारसे निर्वेद प्राप्त सब प्रकारक
रखनेवाले योगीक
है—ऐसा विश्वास करनेवाले व्यक्ति ही हरिनामका वास्तविक फल प्राप्त करते हैं।

नामाभास और नामका भेद नहीं समझकर क
हैं कि नाम अक्षरमय है। अतएव श्रद्धा नहीं रहनेपर भी नाम लेनेसे फल होगा ही। वे लोग अजामिलका दृष्टान्त देते हैं तथा "सांक
पारिहास्यं वा" आदि शास्त्र-वचनोंका उदाहरण प्रस्तुत करते हैं। यह बात तो पहले ही बतलायी जा चुकी है कि हरिनाम चैतन्यरसविग्रह हैं तथा प्राकृत इन्द्रियग्राह्य नहीं हैं। अतएव निरपराध होकर नामाश्रय नहीं करनेसे नामका फलोदय सम्भव नहीं है। जो अश्रद्धापूर्वक नामोच्चारण करते हैं, उनक
सम्भव नहीं है। अश्रद्धालु व्यक्तियोंक
है कि क
है। इसलिए अश्रद्धापूर्वक अर्थवाद करक

रूपमें जो कर्मकाण्डका अङ्ग समझते हैं अथवा ऐसा ही प्रचार करते हैं, वे नितान्त बहिर्मुख और नामापराधी हैं। वैष्णवजन इस अपराधका यत्नपूर्वक वर्जन करेंगे।

क

समस्त प्रकारक

कर ली है। इस विश्वासक

या बदमाशी आदि पाप कर्मोंको करक

जिससे उनक

नामापराधी हैं। जो लोग नामाश्रय करते हैं, वे एक बार चिद्रसका आस्वादनकर फिर कभी भी जड़ीय असत् वस्तुओंमें आसक्त नहीं होते।

क

धर्म तथा तीर्थ यात्राकी चेष्टाएँ—ये सब जिस प्रकार शुभकर हैं, नाम भी वैसी ही कोई वस्तु है। ऐसे व्यक्ति नामापराधी हैं। नाम सदा चिद्रसस्वरूप हैं। अन्यान्य समस्त सत्कर्म ही जड़मय हैं। अतएव वे नामक

नामक

कर सकते हैं। जिस प्रकार हीरे और काँचमें भेद है, ठीक उसी प्रकार हरिनाम और दूसरे-दूसरे शुभ कर्मोंमें वस्तुगत भेद है।

अश्रद्धालु व्यक्तियोंको हरिनामका उपदेश या मन्त्र देनेवाले व्यक्ति नामापराधी हैं। जिस प्रकार शूकरको मुक्ताफल देनेसे क

नहीं होता, उलटे मुक्ताफलका ही अपमान या अवज्ञा करना हो जाता है, उसी प्रकार जिन लोगोंमें हरिनामक

अभाव है, उन्हें नामोपदेश करना नितान्त अन्याय है। ऐसे लोगोंको हरिनामक

उचित है। श्रद्धा होनेक

अपनेको गुरु अभिमानकर अपात्रको भी हरिनामका उपदेश करते हैं, वे नामापराधक

हरिनामका माहात्म्य श्रवण करक
श्रद्धा न करक
त्याग नहीं करते, वे भी नामापराधी हैं।

इस प्रकार नामापराध वर्जन नहीं करनेसे हरिनाम उदित नहीं होते। कलियुग-पावनावतारी श्रीश्रीचैतन्य महाप्रभुने संसारी जीवोंक
नाना प्रकारक

तृणादपि सुनीचेन तरोरपि सहिष्णुना।
अमानिना मानदेन कीर्तनीयः सदा हरिः॥

अपनेको तृणसे भी तुच्छ मानकर, वृक्षसे भी अधिक सहिष्णु होकर स्वयं अभिमानशून्य और दूसरोंको मान देनेवाला बनकर जीव हरिनाम-सङ्कीर्त्तनमें अधिकार प्राप्त करता है। व्यवहार शुद्धिक
हरिनाम ग्रहण करनेकी व्यवस्था ही इस वाणीका मुख्य तात्पर्य है। जो अपनेको सबसे अधिक दीन-हीन समझते हैं, वे कभी भी साधुकी निन्दा, शिव आदि देवताओंकी भेदबुद्धि द्वारा अवज्ञा, गुरुकी अवज्ञा एवं सत्-शास्त्रोंकी निन्दा नहीं कर सकते तथा हरिनामक
प्रति उनक
शुष्कज्ञानजात तर्क द्वारा 'हरि' शब्दमें निर्गुण-ब्रह्मवादकी कल्पना नहीं करते, नामक
साथ हरिनामको समान नहीं मानते, अश्रद्धालु व्यक्तियोंको हरिनाम नहीं देते तथा नामक
स्वभावतः दस प्रकारक
किसीक
उपकार ही करते हैं। वे जगत्का समस्त कार्य करनेपर भी स्वयं अपनेमें भोक्ता या कर्त्ताका अभिमान नहीं रखते। वे अपनेको जगत्का दास मानकर जगत्की सेवामें ही लगे रहते हैं।

ऐसे अधिकारी व्यक्तिक
तब अन्तःस्थित चित्-जगत्से बिजलीकी भाँति चित्-ज्योति व्याप्त होकर जगत्क

है। अतएव, महात्माओ! अपराधरहित होकर निरन्तर हरिनामका कीर्त्तन कीजिये। हरिनामक
सहारा नहीं है। इस दुस्तर भवसमुद्रमें डूबते हुए व्यक्तिको ज्ञान या कर्म आदिका सहारा लेना क
महासागरको पार करनेकी इच्छाकी भाँति सर्वथा निरर्थक है। अतः हरिनामरूप महापोत (बड़े जहाज) का अवलम्बन करक
भवसमुद्रको पार कीजिये।

हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे
हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे